द्यानतपदसंग्रहकी वर्णानुक्रमणिका ।

पृष्ठ पदसंख्या

क।

पृष्ठ पदसंख्या

ख।

ग।

घ।

च।

ज।

श्रीवीतरागाय नम. ।

जैनपदसंग्रह

चतुर्थभाग ।

अर्थात्

कविवर द्यानतरायजीके उत्तमोत्तम

पदोंका संग्रह ।

जिसे

श्रीजैनग्रन्थरत्नाकरकार्यालयके स्वामियोंने

मुम्बईके

निर्णयसागरप्रेसमें वा. रा. घाणेकरके प्रबंधसे

मुद्रित कराके प्रकाशित किया ।

श्रीवीरनिर्वाण संवत् २४३५ । ईसवी सन् १९०९.

पहिलीवार ००० प्रति ।

न्योछावर- ॥= आना ।

श्रीपरमात्मने नमः ।

पदसंग्रह-चतुर्थभाग ।

अर्थात्—

कविवर द्यानतरायजीके पदोंका संग्रह ।

१ ।

कर कर आतमहित रे प्रानी ॥ टेक ॥ जिन परिनामनि वंध होत है, सो परनति तज दुखदानी ॥ कर० ॥ १ ॥ कौन पुरुष तुम कहां रहत हौ, किहिकी संगति रति मानी । जे परजाय प्रगट पुद्गलमय, ते तैं क्यों अपनी जानी ॥ कर० ॥ २ ॥ चेतनजोति झलक[1] तुझमाहीं, अनुपम सो तैं विसरानी । जाकी पटंतर[2] लगत आन नाहिं, दीप रतन शशि सूरानी[3] ॥ कर० ॥ ३ ॥ आपमें आप लखो अपनो पद, द्यानत करि तन-मन-वानी । परमेश्वरपद आप पाइये, यौं भाषैं केवलज्ञानी ॥ कर० ॥ ४ ॥

---

१ प्रकाश । २ समान । ३ सूर्यकी ।

२ । राग–विहागरो ।

जानत क्यों नहिं रे, हे नर आतम ज्ञानी ॥ टेक ॥ रागदोष पुद्गलकी संगति, निहचै शुद्धनिशानी ॥ जानत० ॥ १ ॥ जाय नरक पशु नर सुर गतिमें, ये पर जाय विरानी । सिद्ध–स्वरूप सदा अविनाशी, जानत विरला प्रानी ॥ जानत० ॥ २ ॥ कियो न काहू हरै न कोई, गुरु शिख कौन कहानी । जनम-मरन-मलरहित अमल है, कीच विना ज्यों पानी ॥ जानत० ॥ ३ ॥ सार पदारथ है तिहुँ जगमें, नहिं क्रोधी नहिं मानी । द्यानत सो घटमाहिं विराजै, लख हूजै शिवथानी ॥ जानत० ॥ ४ ॥

३ । राग–काफी ।

आपा प्रभु जाना मैं जाना ॥ टेक ॥ परमेसुर यह मैं इस सेवक, ऐसो भर्म पलाना ॥ आपा० ॥ १ ॥ जो परमेसुर सो मम मूरति, जो मम सो भगवाना । मरमी होय सोइ तो जानै, जानै नाहीं आना[1] ॥ आपा० ॥ २ ॥ जाकौ ध्यान धरत हैं मुनिगन, पावत हैं निरवाना । अर्हत सिद्ध सूरि गुरु मुनिपद, आतमरूप बखाना ॥ आपा० ॥ ३ ॥ जो निगोदमें सो मुझमाहीं, सोई है शिव थाना । द्यानत निहचैं रंच फेर नहिं, जानै सो मतिवाना[2] ॥ आपा० ॥ ४ ॥

---

१ दूसरा । २ बुद्धिवान ।

४ । राग—विहागड़ो ।

अब हम नेमिजीकी शरन ॥ टेक ॥ और ठौर न मन लगत है, छांड़ि प्रभुके चरन ॥ अब० ॥ १ ॥ अब० ॥ १ ॥ सकल भवि-अघ-दहन-वारिद[1], विरद तारन तरन । इंद चंद फनिंद ध्यावैं, पाय सुख दुख-हरन ॥ अब० ॥ २ ॥ भरम[2]-तम-हर-तरनि-दीपति, करमगन खयकरन । गनधरादि सुरादि जाके, गुन सकत नहिं वरन ॥ अब० ॥ ३ ॥ जा समान त्रिलोकमें हम, सुन्यौ और न करन[3] । दास द्यानत दयानिधि प्रभु, क्यों तजैंगे परन[4] ॥ अब० ॥ ४ ॥

५ । राग—सोरठा ।

गलतानमता कब आवैगा ॥ टेक ॥ राग दोष परणति मिट जै है, तब जियरा सुख पावैगा ॥ गलता० ॥ १ ॥ मैं ही ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय मैं, तीनों भेद मिटावैगा । करता किरिया करमभेद मिटि, एक दरब लौं लावैगा ॥ गलता० ॥ २ ॥ निहचैं अमल मलिन व्योहारी, दोनों पक्ष नसावैगा । भेद गुण गुणीको नाहिं ह्वै है, गुरु सिख कौन कहावैगा ॥ गलता० ॥ ३ ॥ द्यानत साधक साधि एक करि, दुविधा दूर

---

१ भव्यजीवोंरूपी अग्निको मेघ । २ भ्रमरूपी अंधकारके हरन करनेको सूर्यका प्रकाश । ३ कानोंसे । ४ प्रण—प्रतिज्ञा ।

बहावैगा । वचनभेद कहवत सब मिटकै, ज्योंका त्यों ठहरावैगा ॥ गलता० ॥ ४ ॥

६ । राग—सारंग ।

मोहि कब ऐसा दिन आय है ॥ टेक ॥ सकल वि-भाव अभाव होंहिंगे, विकलपता मिट जाय है ॥ मोहि० ॥ १ ॥ यह परमातम यह मम आतम, भेद-बुद्धि न रहाय है । ओरनिकी का बात चलावे, भेद-विज्ञान पलाय है ॥ मोहि० ॥ २ ॥ जानैं आप आपमें आपा, सो व्यवहार विलाय है । नय-परमान-निखेपन-माहीं, एक न औसर पाय है ॥ मोहि० ॥ ३ ॥ दर-सन ज्ञान चरनके विकलप, कहो कहाँ ठहराय है । द्यानत चेतन चेतन ह्वै है, पुदगल पुदगल थाय है ॥ मोहि० ॥ ४ ॥

७ । राग—विलावल ।

जिन नाम सुमर मन ! बावरे, कहा इत उत भटकै ॥ जिन० ॥ टेक ॥ विषय प्रगट विष—बेल हैं, इनमें जिन[1] अटकै ॥ जिन नाम० ॥ १ ॥ दुर्लभ नरभव पायकै, नगसों मत पटकै । फिर पीछैं पछतायगो, औसर जब सटकै[2] ॥ जिन नाम० ॥ २ ॥ एक घरी है सफल जो, प्रभु-गुन-रस गटकै । कोटि वरष जीयो वृथा, जो थोथा

---

१ मत । २ निकल जावे ।

फटकै ॥ जिन नाम० ॥ ३ ॥ द्यानत उत्तम भजन है, लीजै मन रटकै। भव भवके पातक सबै, जै हैं तो कटकै ॥ जिन नाम० ॥ ४ ॥

८। राग—काफी।

तू जिनवर स्वामी मेरा, मैं सेवक प्रभु हौं तेरा ॥ टेक ॥ तुम सुमरन विन मैं वहु कीना, नाना जोनि वसेरा। भाग उदय तुम दरसन पायो, पाप भज्यो तजि खेरा ॥ तू जिनवर० ॥ १ ॥ तुम देवाधिदेव परमेसुर, दीजै दान सवेरा। जो तुम मोख देत नहिं हमको, कहाँ जायँ किंहि डेरा ॥ २ ॥ मात तात तूही वड़ भ्राता, तोसौं प्रेम घनेरा। द्यानत तार निकार जगततैं, फेर न ह्वै भवफेरा ॥ तू जिनवर० ॥ ३ ॥

९। राग—काफी धमाल।

सो ज्ञाता मेरे मन माना, जिन निज-निज, पर-पर जाना ॥ टेक ॥ छहौं दरवतैं भिन्न जानकै, नव तत्वनितैं आना। ताकौं देखै ताकौं जानै, ताहीके रसमें साना ॥ सो ज्ञाता० ॥ १ ॥ कर्म शुभाशुभ जो आवत हैं, सो तो पर पहिचाना। तीन भवनको राज न चाहै, यद्यपि गांठ दरव वहु ना ॥ सो ज्ञाता० ॥ २ ॥ अंखय[1] अनन्ती सम्पति विलसै, भव-तन-भोग-

---

१ अक्षय।

मगन ना । द्यानत ता ऊपर बलिहारी, सोई " जीवन मुकत" भना ॥ सो ज्ञाता० ॥ ३ ॥

१० । राग—केदारो ।

सुन मन! नेमिजीके बैन ॥ टेक ॥ कुमतिनासन ज्ञानभासन, सुखकरन दिन रैन ॥ सुन० ॥ १ ॥ वचन सुनि बहु होंहिं चक्री, बहु लहैं पद मैन[1] । इंद चंद फनिंद पद लैं, शुद्ध आतम ऐन ॥ सुन० ॥ २ ॥ बैन सुन बहु मुकत पहुँचे, वचन बिनु एकै न । हैं अनक्षर रूप अक्षर, सब सभा सुखदैन ॥ सुन० ॥ ३ ॥ प्रगट लोक अलोक सब किय, हरिय मिथ्या-सैन । वचन सरधा करौ द्यानत, ज्यों लहौ पद चैन ॥ सुन० ॥ ४ ॥

११ । राग—मल्हार ।

काहेको सोचत अति भारी, रे मन! ॥ टेक ॥ पूरब करमनकी थित बाँधी, सो तो टरत न टारी ॥ काहे० ॥ १ ॥ सब दरबनिकी तीन कालकी, विधि न्यारीकी न्यारी । केवलज्ञानविषैं प्रतिभासी, सो सो ह्वै है सारी ॥ काहे० ॥ २ ॥ सोच किये बहु बंध बढ़त है, उपजत है दुख ख्वारी । चिंता चिता समान बखानी, बुद्धि करत है कारी ॥ काहे० ॥ ३ ॥

---

[1] कामदेव ।

रोग सोग उपजत चिंतातैं, कहौ कौन गुनवारी। द्यानत अनुभव करि शिव पहुँचे, जिन चिंता सब जारी ॥ काहे० ॥ ४ ॥

१२ । राग—केदारो ।

रे जिय! जनम लाहो[1] लेह ॥ टेक ॥ चरन ते जिन भवन पहुँचैं, दान दैं कर जेह ॥ रे जिय० ॥१॥ उर[2] सोई जामैं दया है, अरु रुधिरको गेह । जीभ सो जिन नाम गावै, सांचसौं करै नेह ॥ रे जिय० ॥ २ ॥ आंख ते जिनराज देखैं, और आँखैं खेह । श्रवन ते जिनवचन सुनि शुभ, तप तपै सो देह ॥ रे जिय० ॥ ३ ॥ सफल तन इह भांति ह्वै है, और भांति न केह । ह्वै सुखी मन राम ध्यावो, कहैं सदगुरु येह ॥ रे जिय० ॥ ४ ॥

१३ ।

चल देखैं प्यारी, नेमि नवल व्रतधारी ॥ टेक ॥ रोग दोप बिन शोभन[3] मूरति, मुकतिनाथ अविकारी ॥ चल० ॥ १ ॥ क्रोध विना किमि करम विनाशैं, यह अचरज मन भारी ॥ चल० ॥ २ ॥ वचन अनक्षर सब जिय समझैं, भापा न्यारी न्यारी ॥ चल० ॥ ३ ॥ चतुरानन[4] सब खलक[5] विलोकैं, पूरव मुख प्रभुका री

१ लाभ । २ हृदय । ३ सुहावनी । ४ चार मुख । ५ जगत ।

॥ चल० ॥ ४ ॥ केवलज्ञान आदि गुण प्रगटे, नेकु न मान किया री ॥ चल० ॥ ५ ॥ प्रभुकी महिमा प्रभु न कहि सकैं, हम तुम कौन विचारी ॥ चल० ॥ ६ ॥ द्यानत नेमिनाथ विन आली, कह मोकौं को तारी ॥ चल० ॥ ७ ॥

१४ । राग—सोरठ कड़खा ।

रुल्यो चिरकाल, जगजाल चहुँगति विषैं, आज जिनराज-तुम शरन आयो ॥ टेक ॥ सह्यो दुख घोर, नहिं छोर आवै कहत, तुमसौं कछु छिप्यो नहिं तुम वतायो ॥ रुल्यो० ॥ १ ॥ तु ही संसारतारक नहीं दूसरो, ऐसो मुह भेद न किन्ही सुनायो ॥ रुल्यो० ॥ २ ॥ सकल सुर असुर नरनाथ वंदत चरन, नाभिनन्दन निपुन मुनिन ध्यायो ॥ रुल्यो० ॥ ३ ॥ तु ही अरहन्त भगवन्त गुणवन्त प्रभु, खुले मुझ भाग अव दरश पायो ॥ रुल्यो० ॥ ४ ॥ सिद्ध हौं शुद्ध हौं वुद्ध अविरुद्ध हौं, ईश जगदीश वहु गुणनि गायो ॥ रुल्यो० ॥ ५ ॥ सर्व चिन्ता गई वुद्धि निर्मल भई, जव हि चित जुगलचरननि लगायो ॥ रुल्यो० ॥ ६ ॥ भयो निहचिन्त द्यानत चरन शर्न गहि, तार अव नाथ तेरो कहायो ॥ रुल्यो० ॥ ७ ॥

१५ । राग—मल्हार ।

जगतमें सम्यक उत्तम भाई ॥ टेक ॥ सम्यकसहित प्रधान नरकमें, धिक शठ सुरगति पाई ॥ जगत० ॥ १ ॥ श्रावकव्रत मुनिव्रत जे पालैं, ममता बुधि अधिकाई । तिनतैं अधिक असंजमचारी, जिन आतम लव लाई ॥ जगत० ॥ २ ॥ पंच-परावर्तन तैं कीनैं, वहुत वार दुखदाई । लख चौरासि स्वांग धरि नाच्यौ, ज्ञानकला नहिं आई ॥ जगत० ॥ ३ ॥ सम्यक विन तिहुँ जग दुखदाई, जहँ भावै तहँ जाई । द्यानत सम्यक आतम अनुभव, सद्गुरु सीख वताई ॥ जगत० ॥४॥

१६ । राग—गौड़ी ।

भाई ! अव मैं ऐसा जाना ॥ टेक ॥ पुद्गल दरव अचेत भिन्न है, मेरा चेतन वाना ॥ भाई० ॥ १ ॥ कल्प[1] अनन्त सहत दुख वीते, दुखकौं सुख कर माना । सुख दुख दोऊ कर्म अवस्था, मैं कर्मनतैं आंना[2] ॥ भाई० ॥ २ ॥ जहाँ भोर था तहाँ भई निशि, निशिकी ठौर विहाना । भूल मिटी निजपद पहिचाना, परमानन्द-निधाना ॥ भाई० ॥ ३ ॥ गूंगे[3] का गुड़ खाँय कहैं किमि, यद्यपि स्वाद पिछाना । द्यानत जिन देख्या ते जानै, मेंडक हंस पखाना ॥ भाई० ॥ ४ ॥

---

१ कल्पकाल । २ अन्य, निराला । ३ कहावत । मेंडक और हंसकी लोकोक्ति ।

१७ । राग—ख्याल ।

आतम जान रे जान रे जान ॥ टेक ॥ जीवनकी इच्छा करै, कबहुँ न मांगै काल । (प्राणी !) सोई जान्यो जीव है, सुख चाहै दुख टाल ॥ आतम० ॥१॥ नैन वैनमें कौन है, कौन सुनत है बात । (प्राणी) देखत क्यों नहिं आपमें, जाकी चेतन जात ॥ आतम० ॥ २ ॥ बाहिर ढूंढ़ैं दूर है, अंतर निपट नजीक । (प्राणी !) ढूंढनवाला कौन है, सोई जानो ठीक ॥ आतम० ॥ ३ ॥ तीन भवनमें देखिया, आतम सम नहिं कोय । (प्राणी !) द्यानत जे अनुभव करैं, तिनकौं शिवसुख होय ॥ आतम० ॥ ४ ॥

१८ । राग—सोरठा । √

मन ! मेरे राग भाव निवार ॥ टेक ॥ राग चिक्कनतैं लगत है कर्मधूलि अपार ॥ मन० ॥ १ ॥ राग आस्रव मूल है, वैराग्य संवर धार । जिन न जान्यो भेद यह, वह गयो नरभव हार ॥ मन० ॥ २ ॥ दान पूजा शील जप तप, भाव विविध प्रकार । राग विन शिव सुख करत हैं, रागतैं संसार ॥ मन० ॥ ३ ॥ वीतराग कहा कियो, यह बात प्रगट निहार । सोइ कर सुखहेत द्यानत, शुद्ध अनुभव सार ॥ मन० ॥ ४ ॥

१९ । राग—रामकली ।

हम न किसीके कोई न हमारा, झूठा है जगका ब्यो-हारा ॥ टेक ॥ तनसंबंधी सब परवारा, सो तन हमने जाना न्यारा ॥ हम० ॥ १ ॥ पुन्य उदय सुखका बढ़वारा, पाप उदय दुख होत अपारा । पाप पुन्य दोऊ संसारा, मैं सब देखन जाननहारा ॥ हम० ॥ २ ॥ मैं तिहुँ जग तिहुँ काल अकेला, पर संजोग भया बहु मेला । थिति पूरी करि खिर खिर जांहीं, मेरे हर्ष शोक कछु नाहीं ॥ हम न० ॥ ३ ॥ राग भावतैं सज्जन मानैं, दोष भावतैं दुर्जन जानैं । राग दोष दोऊ मम नाहीं, द्यानत मैं चेतनपदमाहीं ॥ हम न० ॥ ४ ॥

२० । राग—पंचम ।

भम्यो जी भम्यो, संसार महावन, सुख तो कबहुँ न पायो जी ॥ टेक ॥ पुदगल जीव एक करि जान्यो, भेद-ज्ञान न सुहायो जी ॥ भम्यो० ॥ १ ॥ मनवचकाय जीव संहारे[1], झूठो वचन बनायो जी । चोरी करके हरष बढ़ायो, विषयभोग गरवायो जी ॥ भम्यो० ॥२॥ नरकमाहिं छेदन भेदन बहु, साधारण[2] वसि आयो जी । गरभ जनम नरभव दुख देखे, देव मरत बिललायो जी ॥ भम्यो० ॥ ३ ॥ द्यानत अब जिनवचन सुनै मैं,

---

१ घाते । २ साधारण वनस्पति ।

भवमल पाप वहायो जी । आदिनाथ अरहन्त आदि-गुरु, चरनकमल चित लायो जी ॥ भम्यो० ॥ ४ ॥

२१ । राग—रामकली ।

जियको लोभ महा दुखदाई, जाकी शोभा (?)वरनी न जाई ॥ टेक ॥ लोभ करै मूरख संसारी, छांड़ै पण्डित शिव अधिकारी ॥ जियको० ॥ १ ॥ तजि घर-वास फिरै वनमाहीं, कनक कामिनी छांड़ै नाहीं । लोक रिझावनको व्रत लीना, व्रत न होय ठगई सा कीना ॥ जियको० ॥ २ ॥ लोभवशात जीव हत डारै, झूठ बोल चोरी चित धारै । नारि गहै परिग्रह विसतारै, पांच पाप कर नरक सिधारै ॥ जियको ॥ ३ ॥ जोगी जती गृही वनवासी, वैरागी दरवेश[1] सन्यासी । अजस खान जसकी नहिं रेखा, द्यानत जिनकै लोभ विशेखा[2] ॥ जियको० ॥ ४ ॥

२२ ।

रे मन ! भज भज दीनदयाल ॥ टेक ॥ जाके नाम लेत इक छिनमैं, कटैं कोट अघजाल ॥ रे मन० ॥१॥ परमब्रह्म परमेश्वर स्वामी, देखैं होत निहाल । सुमरन करत परम सुख पावत, सेवत भाजै काल ॥ रे मन० ॥ २ ॥ इंद फनिंद चक्रधर[3] गावैं, जाको नाम रसाल ।

---

१ फकीर । २ विशेषता । ३ चक्रवर्ती ।

जाको नाम ज्ञान परगासै, नाशै मिथ्याजाल ॥ रे मन० ॥ ३ ॥ जाके नाम समान नहीं कछु, ऊरध मध्य पताल। सोई नाम जपो नित द्यानत, छांड़ि विषय विकराल ॥ रे मन० ॥ ४ ॥

२३।

तुम प्रभु कहियत दीनदयाल ॥ टेक ॥ आपन जाय मुकतमैं बैठे, हम जु रुलत जगजाल ॥ तुम० ॥ १ ॥ तुमरो नाम जपैं हम नीके, मन वच तीनौं काल। तुम तो हमको कछू देत नहिं, हमरो कौन हवाल ॥ तुम० ॥ २ ॥ बुरे भले हम भगत तिहारे, जानत हो हम चाल। और कछू नहिं यह चाहत हैं, राग दोषकौं टाल ॥ तुम० ॥ ३ ॥ हमसौं चूक परी सो बकसो[1], तुम तो कृपाविशाल। द्यानत एक बार प्रभु जगतैं, हमको लेहु निकाल ॥ तुम० ॥ ४ ॥

२४। राग—ख्याल।

मैं नेमिजीका बंदा, मैं साहबजीका बंदा ॥ टेक ॥ नैन चकोर दरसको तरसैं, स्वामी पूरनचंदा ॥ मैं नेमिजी० ॥ १ ॥ छहौं दरबमें सार बतायो, आतम आनँदकन्दा। ताको अनुभव नित प्रति कीजे, नासै सब दुख दंदा ॥ मैं नेमिजी ॥ २ ॥ देत धरम उपदेश

१ बख्शो साफ करो।

भविक प्रति, इच्छा नाहिं करंदा । राग दोष मद मोह नहीं नहिं, क्रोध लोभ छल छंदा ॥ मैं नेमिजी० ॥ ३ ॥ जाको जस कहि सकैं न क्योंही, इंद फनिंद नरिन्दा । सुमरन भजन सार है द्यानत, और बात सब धंदा ॥ मैं नेमिजी० ॥ ४ ॥

२५ ।

मैं निज आतम कब ध्याऊंगा ॥ टेक ॥ रागादिक परिनाम त्यागकै, समतासौं लौ लाऊंगा ॥ मैं निज० ॥ १ ॥ मन वच काय जोग थिर करकै, ज्ञान समाधि लगाऊंगा । कब हौं[1] खिपकश्रेणि[2] चढ़ि ध्याऊं, चारित मोह नशाऊंगा ॥ मैं निज० ॥ २ ॥ चारों करम घातिया खय[3] करि, परमातम पद पाऊंगा । ज्ञान दरश सुख बल भंडारा, चार अघाति बहाऊंगा ॥ मैं निज० ॥ ३ ॥ परम निरंजन सिद्ध शुद्धपद, परमानंद कहाऊंगा । द्यानत यह सम्पति जब पाऊं, बहुरि न जगमें आऊंगा ॥ मैं निज० ॥ ४ ॥

२६ ।

अरहंत सुमर मन बावरे ! ॥ टेक ॥ ख्याति[4] लाभ पूजा तजि भाई, अन्तर प्रभु लौ लाव रे ॥ अरहंत० ॥१॥ नरभव पाय अकारथ खोवै, विषय भोग जु बढ़ाव रे ।

---

१ मैं । २ क्षपकश्रेणी । ३ नाशकर । ४ यश, कीर्ति ।

प्राण गये पछितैहै मनवा, छिन छिन छीजै आव[1] रे ॥ अरहंत० ॥ २ ॥ जुवती[2] तन धन सुत मित[3] परिजन[4], गज तुरंग रथ चाव रे । यह संसार सुपनकी माया, आंख मीचि दिखराव रे ॥ अरहंत० ॥ ३ ॥ ध्याव ध्याव रे अब है दावरे, नाहीं मंगल गाव रे । द्यानत वहुत कहां लौं कहिये, फेर न कछू उपाव रे ॥ अरहंत० ॥ ४ ॥

२७।

वन्दौ नेमि उदासी, मद मारिवेकौं ॥ टेक ॥ रजमतसी जिन नारी छाँरी, जाय भये वनवासी ॥ वन्दौं० ॥ १ ॥ हय गय रथ पायक सब छांड़े, तोरी ममता फाँसी । पंच महाव्रत दुद्धर धारे, राखी प्रकृति पचासी ॥ वन्दौं० ॥ २ ॥ जाकै दरसन ज्ञान विराजत, लहि वीरज सुखरासी । जाकौं वंदत त्रिभुवन-नायक, लोकालोकप्रकासी ॥ वन्दौं० ॥ ३ ॥ सिद्ध शुद्ध परमातम राजैं, अविचल थान निवासी । द्यानत मन अलि[5] प्रभु पद-पंकज, रमत रमत अघ जासी[6] ॥ वन्दौं० ॥ ४ ॥

२८ ।

आतम अनुभव कीजै हो ॥ टेक ॥ जनम जरा अरु मरन नाशकै, अनत काल लौं जीजै हो ॥ आतम०

---

१ आयु । २ स्त्री । ३ मित्र । ४ नौकर चाकर । ५ भ्रमर । ६ नाश होगा ।

॥ १ ॥ देव धरम गुरुकी सरधा करि, कुगुरु आदि तज दीजै हो । छहौं दरव नव तत्त्व परखकै, चेतन सार गहीजै हो ॥ आतम० ॥ २ ॥ दरव करम नो करम भिन्न करि, सूक्षमदृष्टि धरीजै हो । भाव करमतैं भिन्न जानिकै, वुधि विलास न करीजै हो ॥ आतम० ॥ ३ ॥ आप आप जानै सो अनुभव, द्यानत शिवका दीजै हो । और उपाय वन्यो नाहिं वनि है, करै सो दक्ष कहीजै हो ॥ आतम० ॥ ४ ॥

२९ ।

कर रे! कर रे! कर रे!, तू आतम हित कर रे ॥ टेक ॥ काल अनन्त गयो जग भमतैं, भव भवके दुख हर रे ॥ कर रे० ॥ १ ॥ लाख कोटि भव तपस्या करतैं, जितो कर्म तेरो जर रे । स्वास उस्वासमाहिं सो नासै, जब अनुभव चित धर रे ॥ कर रे० ॥ २ ॥ काहे कष्ट सहै वन माहीं । राग दोप परिहर[1] रे । काज होय समभाव विना नाहिं, भावौ पचि पचि मर रे ॥ कर रे ॥ ३ ॥ लाख सीखकी सीख एक यह, आतम निज, पर पर रे । कोट ग्रंथको सार यही है, द्यानत लख भव तर रे ॥ कर रे ॥ ४ ॥

१ त्याग । २ नाटे ।

३० । राग—मल्हार ।

परमगुरु वरसत ज्ञान झरी ॥ टेक ॥ हरपि हरपि व्हु गरजि गरजिकै, मिथ्यातपन हरी ॥ परमगुरु०॥१॥ सरधा भूमि सुहावनि लागै, संशय वेल हरी। भविजनमनसरवर भरि उमड़े, समुझि पवन सियरी ॥ परमगुरु० ॥ २ ॥ स्यादवाद नय विजली चमकै, पर-मत-शिखर परी । चातक मोर साधु श्रावकके, हृदय सुभक्ति भरी ॥ परमगुरु० ॥ ३ ॥ जप तप परमानन्द व्ढ्यो है, सुसमय नींव धरी । द्यानत पावन पावस आयो, थिरता शुद्ध करी ॥ परमगुरु०॥ ४ ॥

३१ । राग—काफी ।

अव हम आतमको पहचाना जी ॥ टेक ॥ जैसा सिद्धक्षेत्रमें राजत, तैसा घटमें जाना जी ॥ अव हम० ॥१॥ देहादिक परद्रव्य न मेरे, मेरा चेतन वाना जी ॥ अव हम० ॥ २ ॥ द्यानत जो जानै सो स्याना[1], नहिं जानैं सो दिवाना जी ॥ अव हम० ॥ ३ ॥

३२ ।

मेरी वेर कहा ढील करी जी ॥ टेक ॥ सूलीसों सिंघासन कीनो, सेठ सुदर्शन विपति हरी जी ॥ मेरी वेर० ॥१॥ सीता सती अगनिमैं पैठी, पावक[2] नीर

१ पागल । २ अग्नि ।

करी सगरी जी । वारिषेणपै खड्ग चलायो, फूल-माल कीनी सुथरी जी ॥ मेरी वेर० ॥ २ ॥ धन्यां[1] वापी पस्त्रो निकाल्यो, ता घर रिद्ध अनेक भरी जी । सिरीपाल सागरतैं तास्त्रो, राजभोगकै मुकत वरी जी ॥ मेरी वेर० ॥३॥ सांप कियो फूलनकी माला, सोमापर तुम दया धरी जी । द्यानत मैं कछु जाँचत नाहीं, कर वैराग्य दशा हमरी जी ॥ मेरी वेर० ॥ ४ ॥

३२ ।

जिनके हिरदै भगवान वसैं, तिन आनका ध्यान किया न किया ॥ टेक ॥ चक्री एक मिलाप भयेतैं, और नर न मिलिया मिलिया ॥ जिनके० ॥ १ ॥ इक चिन्तामणि वांछितदायक, और नग[2] न गहिया गहिया । पारस एक कनी[3] कर आवै, और धन न लहिया लहिया ॥ जिनके० ॥ २ ॥ एक भान दश दिशि उजियारा, और ग्रह न उदियाँ[4] उदिया । एक कल्प-तरु सब सुखदाता, और तरु न उगिया उगिया ॥ जिनके० ॥३॥ एक अभय महा दान देयके, और सुदान दिया न दिया । द्यानत ज्ञानसुधारस चाख्यो, अम्रत और पिया न पिया ॥ जिनके० ॥ ४ ॥

---

१ धन्यकुमार । २ रत्न । ३ टुकड़ा । ४ सूरज ।

३४ । राग—परज ।

माई! आज आनंद कछु कहे न बनै ॥टेक॥ नाभिराय मरुदेवी-नंदन, ब्याह उछाह त्रिलोक भनै ॥ माई०॥१॥ सीस मुकट गल[1] माल अनूपम, भूषन वसनन को वरनै ॥ माई० ॥ २ ॥ गृह सुखकार रतनमय कीनों, चौंरी मंडप सुरगननै ॥ माई० ॥ ३ ॥ द्यानत धन्य सुनंदा-कन्या, जाको आदीश्वर परनै ॥ माई० ॥ ४ ॥

३५ । राग—परज ।

माई ! आज आनंद हैं या नगरी ॥ टेक ॥ गज-गमनी शशि-वदनी[2] तरुनी, मंगल गावत हैं सिगरी ॥ १ ॥ माई० ॥ नाभिरायघर पुत्र भयो है, किये हैं अजाचक जाचक री ॥ २ ॥ माई० ॥ द्यानत धन्य कूँख मरुदेवी, सुर सेवत जाके पँग[3] री ॥ ३ ॥ माई० ॥

३६ । ~

जिनके हिरदै प्रभुनाम नहीं तिन, नर अवतार लिया न लिया ॥ टेक ॥ दान विना घर-वास वासकै, लोभ-मलीन धियों[4] न धिया ॥ जिनके० ॥ १ ॥ मदिरापान कियो घट अन्तर, जल मल सोधि पिया न पिया । आन प्रानके मांस भखेतैं, करुनाभाव हिया[5] न हिया ॥ जिनके० ॥ २ ॥ रूपवान गुनखान वानि शुभ, शील-

---

१ कंठमें । २ चन्द्रमुखी । ३ चरण । ४ बुद्धि । ५ हृदय ।

विहीन तिंया न तिया । कीरतवंत मृतक जीवत हैं, अपजसवंत जिया न जिया ॥ जिनके० ॥ ३ ॥ धाममाहिं कछु दाम न आये, बहु व्योपार किया न किया । द्यानत एक विवेक किये विन, दान अनेक दिया न दिया ॥ जिनके० ॥ ४ ॥

३७ ।

विपतिमें धर धीर, रे नर! विपतिमें धर धीर ॥टेक॥ सम्पदा ज्यों आपदा रे!, विनश जै है वीर ॥ रे नर० ॥१॥ धूप छाया घटत बढ़ै ज्यों, त्योंहि सुख दुख पीर ॥ रे नर० ॥ २ ॥ दोष द्यानत देय किसको, तोरि करम-जँजीर ॥ रे नर० ॥ ३ ॥

३८ ।

गुरु समान दाता नाहिं कोई ॥ टेक ॥ भानु-प्रकाश न नाशत जाको, सो अँधियारा डारै खोई ॥ गुरु०॥ १ ॥ मेघसमान सबनपै वरसै, कछु इच्छा जाके नाहिं होई । नरक पशूगति आगमांहितैं, सुरग मुकत सुख थापै सोई ॥ गुरु० ॥ २ ॥ तीन लोक मन्दिरमें जानौ, दीपकसम परकाशक-लोई । दीपतलैं अँधियार भस्यो है, अंतर वहिर विमल है जोई ॥ गुरु० ॥ ३ ॥ तारन तरन जिहाज सुगुरु हैं, सब कुटुम्ब डोवै ज्यों,

---

१ त्रिया—स्त्री ।

तोई। द्यानत निशिदिन निरमल मनमें, राखो गुरु-पद-पंकज दोई ॥ गुरु० ॥ ४ ॥

३९।

आतम अनुभव करना रे भाई ॥ टेक ॥ जबलों भेद-ज्ञान नाहिं उपजै, जनम मरन दुख भरना रे ॥ भाई० ॥ १ ॥ आतम पढ़ नव तत्त्व बखानै, व्रत तप संजम धरना रे। आतम-ज्ञान बिना नहिं कारज, जोनी-संकट परना रे ॥ भाई० ॥२॥ सकल-ग्रंथ दीपक हैं भाई, मिथ्यातमके हरना रे। कहा करैं ते अंध पुरुषको, जिन्हैं उपजना मरना रे ॥ भाई० ॥३॥ द्यानत जे भवि सुख चाहत हैं, तिनको यह अनुसरना[१] रे। "सोहं" ये दो अक्षर जपकै, भव-जल-पार उतरना रे ॥ भाई० ॥ ४ ॥

४०।

धनि ते साधु रहत वनमाहीं ॥ टेक ॥ शत्रु मित्र सुख दुख सम जानैं, दरसन देखत पाप पलाहीं[२] ॥ धनि० ॥ १ ॥ अट्ठाईस मूलगुण धारैं, मन वच काय चपलता नाहीं। ग्रीषम[३] शैल-शिखा[४] हिमैं[५] तटिनी[६], पावस वरषा अधिक सहाहीं ॥ धनि० ॥ २ ॥ क्रोध मान

---

१ प्रवर्तना, मानना। २ भाग जावें। नाश होवें। ३ गर्मीकी ऋतुमें। ४ शिखर। ५ ठंडमें। ६ नदीके तट।

छल लोभ न जानैं, राग दोष नाहीं उनपाहीं । अमल अखंडित चिद्गुणमंडित, ब्रह्मज्ञानमें लीन रहाहीं ॥ धनि० ॥ ३ ॥ तेई साधु लहैं केवलपद, आठ-काठ दह शिवपुर जाहीं । द्यानत भवि तिनके गुण गावैं, पावैं शिवसुख दुःख नसाहीं ॥ धनि० ॥ ४ ॥

४१ ।

अब हम आतमको पहिचान्यौ ॥ टेक ॥ जबहीसेती मोह सुभट बल, खिनक एकमें भान्यौ ॥ अब० ॥ १ ॥ राग-विरोध-विभाव भजे झर, ममता भाव पलान्यौ । दरसन ज्ञान चरनमें चेतन, भेदरहित परवान्यौ ॥ अब० ॥ २ ॥ जिहि देखैं हम अवर न देख्यो, देख्यो सो सरधान्यौ । ताकौ कहो कहैं कैसैं करि, जा जानै जिन जान्यौ ॥ अब० ॥ ३ ॥ पूरव भाव सुपनवत देखे, अपनो अनुभव तान्यौ । द्यानत ता अनुभव स्वादत ही, जनम सफल करि मान्यौ ॥ अब० ॥ ४ ॥

४२ ।

हमको प्रभु श्रीपास सहाय ॥ टेक ॥ जाके दरसन देखत जब ही, पातक जाय पलाय ॥ हमको० ॥ १ ॥ जाको इंद फनिंद चक्रधर, वंदैं सीस नवाय । सोई

---

१ आत्मीक । २ अष्टकर्मरूपी ईंधन । ३ जिस समयसे । ४ झड़कर, निर्जरा होकर । ५ पाप ।

स्वामी अन्तरजामी, भव्यनिको सुखदाय॥ हमको०॥२॥ जाके चार घातिया वीते, दोष जु गये विलाय। सहित अनन्त चतुष्टय साहब, महिमा कही न जाय॥ हमको० ॥ ३ ॥ तकि या बड़ो मिल्यो है हमको, गहि रहिये मन लाय। द्यानत औसर बीत जायगो, फेर न कछू उपाय ॥ हमको० ॥ ४ ॥

४३।

ज्ञानी ज्ञानी ज्ञानी, नेमिजी! तुम ही हो ज्ञानी ॥टेक॥ तुम्हीं देव गुरु तुम्हीं हमारे, सकल दरव जानी ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ तुम समान कोउ देव न देख्या, तीन भवन छानी। आप तरे भविजीवनि तारे, ममता नहिं आनी ॥ ज्ञानी० ॥ २ ॥ और देव सब रागी द्वेषी, कामी कै मानी। तुम हो वीतराग अकषायी, तजि राजुल रानी॥ ज्ञानी० ॥ ३ ॥ यह संसार दुःख ज्वाला तजि, भये मुकतथानी। द्यानतदास निकास जगततैं, हम गरीब प्रानी ॥ ज्ञानी० ॥ ४ ॥

४४।

देख्या मैंने नेमिजी प्यारा॥ टेक ॥ मूरति ऊपर करों निछावर, तन धन जीवन जोवन सारा॥ देख्या० ॥ १ ॥ जाके नखकी शोभा आगैं, कोटि काम छवि डारैं वारा। कोटि संख्य रवि चन्द छिपत हैं, वपुकी

द्युति है अपरंपारा ॥ देख्या० ॥२॥ जिनके वचन सुनें जिन भविजन, तजि गृह मुनिवरको व्रत धारा । जाको जस इन्द्रादिक गावैं, पावैं सुख नासैं दुख भारा ॥ देख्या० ॥३॥ जाके केवलज्ञान विराजत, लोकालोक प्रकाशन हारा । चरन गहेकी लाज निवाहो, प्रभुजी द्यानत भगत तुम्हारा ॥ देख्या ॥ ४ ॥

४५ ।

आतमरूप अनूपम है, घटमाहिं विराजै हो ॥ टेक ॥ जाके सुमरन जापसों, भव भव दुख भाजै हो ॥ आतम० ॥ १ ॥ केवल दरसन ज्ञानमें, थिरतापद छाजै हो । उपमाको तिहुँ लोकमें, कोऊ वस्तु न राजै हो ॥ आतम० ॥ २ ॥ सहै परीषह भारे जो, जु महाव्रत साजै हो । ज्ञान विना शिव ना लहै, बहुकर्म उपाजै[1] हो ॥ आतम० ॥ ३ ॥ तिहूं लोक तिहुं कालमें, नहिं[2] और इलाजै हो । द्यानत ताकों जानिये, निज स्वारथकाजै हो ॥ आतम० ॥ ४ ॥

४६ ।

नाहिं ऐसो जनम बारंबार ॥ टेक ॥ कठिन कठिन लह्यो मनुष भव, विषय भजि मति हार ॥ नाहिं० ॥१॥ पाय चिन्तामन रतन शठ, छिपत[3] उदधिमँझार । अंध

---

१ उपार्जित करै, कमावै । २ नहीं । ३ फैकता है ।

हाथ बटेर आई, तजत ताहि गँवार ॥ नहिं० ॥ २ ॥ कबहुँ नरक तिरजंच कबहूँ, कबहुँ सुरगविहार । जगत-महिं चिरकाल भमियो, दुलभ नर अवतार ॥ नहिं० ॥ ३ ॥ पाय अम्रत पाँय धोवै, कहत सुगुरु पुकार । तजो विषय कषाय द्यानत, ज्यों लहो भवपार ॥ नहिं० ॥ ४ ॥

४७ ।

तू तो समझ समझ रे! भाई ॥ टेक ॥ निशिदिन विषय भोग लपटाना, धरम वचन न सुहाई ॥ तू तो० ॥ १ ॥ कर मनका लै आसन मास्यो, बाहिज लोक रिझाई । कहा भयो बक-ध्यान धरेतैं, जो मन थिर न रहाई ॥ तू तो० ॥ २ ॥ मास मास उपवास कियेतैं, काया बहुत सुखाई । क्रोध मान छल लोभ न जीत्या, कारज कौन सराई ॥ तू तो० ॥ ३ ॥ मन वच काय जोग थिर करकैं, त्यागो विषयकषाई । द्यानत सुरग मोख सुखदाई, सदगुरु सीख बताई ॥ तू तो० ॥ ४ ॥

४८ ।

घटमें परमातम ध्याइये हो, परम धरम धनहेत । ममता बुद्धि निवारिये हो, टारिये भरम निकेत ॥ घटमें० ॥ १ ॥ प्रथमहिं अशुचि निहारिये हो, सात धातुमय

१ मालाके गुरिया ।

देह । काल अनन्त सहे दुख जानैं, ताको तजो अब नेह ॥ घटमें० ॥ २ ॥ ज्ञानावरनादिक जमरूपी, निजतैं भिन्न निहार । रागादिक परनति लख न्यारी, न्यारो सुबुध विचार ॥ घटमें० ॥ ३ ॥ तहाँ शुद्ध आतम निरविकलप, ह्वै करि तिसको ध्यान । अलप कालमें घाति नसत हैं, उपजत केवलज्ञान ॥ घटमें० ॥ ४ ॥ चार अघाति नाशि शिव पहुँचे, विलसत सुख जु अनन्त । सम्यकदरसनकी यह महिमा, द्यानत लह भव अन्त ॥ घटमें० ॥ ५ ॥

४९ ।

समझत क्यों नहिं वानी, अज्ञानी जन ॥ टेक ॥ स्याद्वाद-अंकित सुखदायक, भाषी केवलज्ञानी ॥ समझत० ॥ १ ॥ जास लखैं निरमल पद पावै, कुमति कुगतिकी हानी । उदय भया जिहिमें परगासी, तिहि जानी सरधानी ॥ समझत० ॥ २ ॥ जामें देव धरम गुरु वरनें, तीनौं मुकतिनिसानी । निश्चय देव धरम गुरु आतम, जानत विरला प्रानी ॥ समझत० ॥ ३ ॥ या जगमाहिं तुझे तारनको, कारन नाव बखानी । द्यानत सो गहिये निहचैसों, हूजे ज्यों शिवथानी ॥ समझत० ॥ ४ ॥

---

१ घातिया कर्म ।

५०।

धिक ! धिक ! जीवन समकित विना ॥ टेक ॥ दान शील तप व्रत श्रुतपूजा, आतम हेत न एक गिना ॥ धिक० ॥ १ ॥ ज्यों विनु कंन्त[1] कामिनी शोभा, अंवुज[2] विनु सरवर ज्यों सुना। जैसे विना एकंड़े[3] विन्दी, त्यों समकित विन सरव गुना ॥ धिक० ॥ २ ॥ जैसे भूप विना सव सेना, नीव विना मंदिर चुनना। जैसे चन्द विंहूनी[4] रजनी[5], इन्हैं आदि जानो निपुना ॥ धिक० ॥ ३ ॥ देव जिनेन्द्र, साधु गुरु, करुना, धर्मराग व्योहार भना। निहचै देव धरम गुरु आतम, द्यानत गहि मन वचन तना ॥ धिक० ॥ ४ ॥

५१। गुजरातीभाषा—गीत।

जीवा ! शूं[6] कहिये तनैं[7] भाई ॥ टेक ॥ पोतानूं[8] रूप अनूप तजीनैं[9], शांमाटे[10] विषयी थांई[11] ॥ जीवा० ॥ १ ॥ इन्द्रीना विषय विषथकी मौटा, ज्ञाननू अम्रत गाई। अमृत छोड़ीनै विषय विष पीधा, साता तो नथी पांई[12] ॥ जीवा० ॥ २ ॥ नरक निगोदना दुख सह आव्यो, वळी[13] तिहँनैं[14] मग धाई। एंहवी[15] वात रूंड़ी[16] न छै तमनैं,

---

१ पति, भर्तार। २ कमल। ३ एक (१) का अंक। ४ रहित। ५ रात्रि। ६ क्या। ७ तुझे। ८ अपना। ९ तज करके। १० किसलिये। ११ हुआ। १२ नहीं प्राप्त हुई। १३ पुन.। १४ उसी। १५ ऐसी। १६ अच्छी।

तीन भवनना राई ॥ जीवा० ॥ ३ ॥ लाख वातनी वात एस छै, मूंकीनै[1] विषयकषाई । द्यानत ते वारैं सुख लाधौ, एम गुरू समझाई ॥ जीवा० ॥ ४ ॥

५२ । राग—मल्हार ।

ज्ञान सरोवर सोई हो भविजन ॥ टेक ॥ भूमि छिमा करुना मरजादा, सम[2]-रस जल जहँ होई ॥ भविजन० ॥ १ ॥ परनति लहर हरख जलचर बहु, नय-पंकति परकारी । सम्यक कमल अष्टदल गुण हैं, सुमन भँवर अधिकारी ॥ भविजन० ॥ २ ॥ संजम शील आदि पल्लव हैं, कमला सुमति निवासी । सुजस सुवास कमल परिचयतैं, परसत भ्रम तप नासी ॥ भविजन० ॥ ३ ॥ भव-मल जात न्हात भविजनका, होत परम सुख साता । द्यानत यह सर और न जानैं, जानैं विरला ज्ञाता ॥ भविजन० ॥ ४ ॥

५३ ।

जीव! तैं मूढ़पना कित पायो ॥ टेक ॥ सब जग स्वारथको चाहत है, स्वारथ तोहि न भायो ॥ जीव० ॥ १ ॥ अशुचि अचेत दुष्ट तनमांहीं, कहा जान विरमायो । परम अतिन्द्री निजसुख हरिकै, विषय रोग लपटायो ॥ जीव० ॥ २ ॥ चेतन नाम भयो जड़ काहे,

---

१ त्यागकर । २ समता ।

अपनो नाम गमायो। तीन लोकको राज छांड़िकै, भीख मांग न लजायो ॥ जीव० ॥ ३ ॥ मूढ़पना मिथ्या जब छूटै, तब तू संत कहायो। द्यानत सुख अनन्त शिव विलसो, यों सदगुरु बतलायो ॥ जीव० ॥ ४ ॥

५४। राग—सारंग।

हम लागे आतमरामसों ॥ टेक ॥ विनाशीक पुद्-गलकी छाया, कौन रमै धनमानसों ॥ हम० ॥ १ ॥ समता सुख घटमें परगास्यो, कौन काज है कामसों। दुविधा-भाव जलांजुलि दीनौं, मेल भयो निज स्वामसों ॥ हम० ॥ २ ॥ भेदज्ञान करि निज परि देख्यौ, कौन विलोकै चामसौं। उँरै परैकी बात न भावै, लौ लाई गुणग्रामसों ॥ हम० ॥ ३ ॥ विकलप भाव रंक सब भाजे, झरि चेतन अभिरामसों। द्यानत आतम अनुभव करिकै, छूटे भव दुखधामसों ॥ हम० ॥ ४ ॥

५५।

प्रभु अब हमको होहु सहाय ॥ टेक ॥ तुम विन हम बहु जुग दुख पायो, अब तो परसे पाँय ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ तीन लोकमें नाम तिहारो, है सबको सुख-दाय। सोई नाम सदा हम गावैं, रीझ जाहु पतियाय प्रभु० ॥ २ ॥ हम तो नाथ कहाये तेरे, जावें कहां सु

---

१ नजीक। २ दूर।

वताय । बाँह गहेकी लाज निवाहौ, जो हो त्रिभुवन-राय ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥ द्यानत सेवकने प्रभु इतनी, विनती करी वनाय । दीनदयाल दया धर मनमें, जमतैं लेहु वचाय ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

५६ ।

वसि संसारमे मैं, पायो दुःख अपार ॥ टेक ॥ मिथ्याभाव हिये धस्यो नहिं, जानों सम्यकचार[1] ॥ वसि० ॥ १ ॥ काल अनादि हि हौं[2] रुल्यौ हो, नरक निगोदमँझार । सुर नर पद वहुते धरे पद, पद प्रति आतम धार ॥ वसि० ॥ २ ॥ जिनको फल दुख-पुंज है हो, ते जानें सुखकार । भ्रम मद पीय विकल भयो नहिं, गह्यो सत्य व्योहार ॥ वसि० ॥ ३ ॥ जिन-वानी जानी नहीं हो, कुगति-विनाशनहार । द्यानत अव सरधा करी दुख, मेटि लह्यो सुखसार ॥ वसि० ॥ ४ ॥

५७ ।

धनि धनि ते मुनि गिरिवनवासी ॥ टेक ॥ मार[3] मार जगजार[4] जारते, द्वादश व्रत तप अभ्यासी ॥ धनि० ॥ १ ॥ कौड़ी लाल[5] पास नहिं जाके, जिन छेदी आसापासी[6] । आतम-आतम, पर-पर जानैं, द्वादश तीन प्रकृति नासी ॥ २ ॥ जा दुख देख दुखी सब जग है,

१ चारित्र । २ मै । ३ कामदेव । ४ जाल । ५ रत्न । ६ फांसी ।

सो दुख लख सुख है तासी । जाकों सब जग सुख मानत है, सो सुख जान्यो दुखरासी ॥ धनि० ॥ ३ ॥ बाहज भेष कहत अंतर गुण, सत्य मधुर हितमित-भासी । द्यानत ते शिवपंथपथिक हैं, पांव परत पातक जासी ॥ धनि० ॥ ४ ॥

५८ । राग—कल्याण (सर्व लघु)

कहत सुगुरु करि सुहित भविकजन ! ॥ टेक ॥ पुद्गल अधरम धरम गगन जम, सब जड़ मम नहिं यह सुमरहु मन ॥ कहत० ॥ १ ॥ नर पशु नरक अमर पर पद लखि, दरब करम तन करम पृथक भन । तुम पद अमल अचल विकलप बिन, अजर अमर शिव अभय अखय गन ॥ कहत० ॥ २ ॥ त्रिभुवनपतिपद तुम पटतर नहिं, तुम पद अतुल न तुल रविशशिगन । वचन कहन मन गहन शकति नहिं, सुरत गमन निज निज गम परनन ॥ कहत० ॥ ३ ॥ इह विधि बँधत खुलत इह विधि जिय, इन विकलपमहिं शिवपद सधत न । निरविकलप अनुभव मन सिधि करि, करम सघन वनदहन दहन-कन ॥ कहत० ॥ ४ ॥

---

१ चरण । २ नमत । ३ नाश होवेंगे । ४ अलग । ५ सिद्ध होता । ६ नाश करनेको । ७ अग्नि कण ।

५९ ।

हो भैया मोरे ! कहु कैसे सुख होय ॥ टेक ॥ लीन कषाय अधीन विषयके, धरम करै नहिं कोय ॥ हो भैया० ॥ १ ॥ पाप उदय लखि रोवत भोंदू !, पाप तजै नहिं सोय । स्वान-वान[1] ज्यों पाहन सूंघै, सिंह हनै रिपु जोय ॥ हो भैया० ॥ २ ॥ धरम करत सुख दुख अघसेती[2], जानत हैं सब लोये[3] । कर दीपक लै कूप परत है, दुख पैहै[4] भव दोयं[5] । हो भैया० ॥३॥ कुगुरु कुदेव कुधर्म भुलायो, देव धरम गुरु खोय । उलट चाल तजि अब सुलटै जो, द्यानत तिरै जग-तोय[6] ॥ भैया० ॥ ४ ॥

६० ।

प्रभु मैं किहि विधि थुति करौं तेरी ॥ टेक ॥ गणधर कहत पार नहिं पावैं, कहा बुद्धि है मेरी ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ शक्र[7] जनम भरि सहस जीभ धरि, तुम जस होत न पूरा । एक जीभ कैसैं गुण गावै, उलू[8] कहै किमि सूरा[9] ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ चमर छत्र सिंघासन बरनों, ये गुण तुमतैं न्यारे । तुम गुण कहन वचन बल नाहीं, नैन गिनैं किमि तारे ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥

---

१ आदत । २ से । ३ लोग । ४ पाओगे । ५ दोनों भव । ६ संसाररूपी जल । ७ इन्द्र । ८ उल्लूपक्षी । ९ सूर्य ।

६१।

भज श्रीआदिचरन मन मेरे, दूर होंय भव भव दुख तेरे ॥ टेक ॥ भगति विना सुख रंच न होई, जो ढूंढ़ै तिहुँ जगमें कोई ॥ भज० ॥ १ ॥ प्रान-पयान-समय दुख भारी, कंठविषैं कफकी अधिकारी। तात मात सुत लोग घनेरा, ता दिन कौन सहाई तेरा ॥ भज० ॥ २ ॥ तू वसि चरण चरण तुझमाहीं, एकमेक ह्वै दुविधा नाहीं। तातैं जीवन सफल कहावै, जनम जरा-मृत पास न आवै ॥ भज० ॥ ३ ॥ अव ही अवसर फिर जम घेरैं, छांड़ि लेरक-बुध सद्गुरु टेरैं। द्यानत और जतन कोउ नाहीं, निरभय होय तिहूँ जगमाहीं ॥ भज० ॥ ४ ॥

६२।

प्राणी लाल! धरम अगाऊ धारौ ॥ टेक ॥ जबलौं धन जोवन हैं तेरे, दान शील न विसारौ ॥ प्राणी० ॥ १ ॥ जबलौं करपद दिढ़ हैं तेरे, पूजा तीरथ सारौ। जीभ नैन जबलौं हैं नीके, प्रभु गुन गाय निहारौ ॥ प्राणी० ॥ २ ॥ आसन श्रवन सबल हैं तोलौं, ध्यान शब्द सुनि धारौ। जरा न आवै गर्द न सतावै, संजम परउपकारौ ॥ प्राणी० ॥ ३ ॥ देह शिथिल मति वि-

---

१ निकलते समय। २ बालबुद्धि। ३ पहले। ४ बीमारी।

फल न तौलौं, तप गहि तत्त्व विचारौ । अन्तसमाधि-पोत[1] चढ़ि अपनो, द्यानत आतम तारौ ॥ प्राणी० ॥४॥

६३ । राग–सोरठ ।

नेमि नवल देखें चल री । लहैं मनुष भवको फल री ॥ टेक ॥ देखनि जात जात दुख तिनको, भान[2] जथा तम-दल दल री । जिन उर नाम वसत है जिनको, तिनको भय नहिं जल थल री ॥ नेमि० ॥१॥ प्रभुके रूप अनूपम ऊपर, कोट काम कीजे वैल[3] री । समोसरनकी अदभुत शोभा, नाचत शक्र सची रल री ॥ नेमि० ॥ २ ॥ भोर उठत पूजत पद प्रभुके, पातक भजत सकल टल री । द्यानत सरन गहौ मन! ताकी, जै हैं भवबंधन गल री ॥ नेमि० ॥ ३ ॥

६४ ।

भवि! पूजौ मन वच श्रीजिनन्द, चितचकोर सुखकरन इंद[4] ॥ टेक ॥ कुमतिकुमुदिनीहरनसूर[5], विघन-सघनवनदहन भूर[6] ॥ भवि० ॥ १ ॥ पाप उरग[7] प्रभु नाम मोर, मोह-महा-तम दलन भोर ॥ भवि० ॥ २ ॥ दुख-दालिद-हर अनघ-रैन[8], द्यानत प्रभु दैं परम चैन ॥ भवि० ॥ ३ ॥

---

१ जहाज । २ सूरज । ३ न्योछावर । ४ चन्द्रमा । ५ सूरज । ६ अग्नि । ७ सर्प । ८ निर्दोष रत्न ।

६५ ।

मगन रहु रे ! शुद्धातममें मगन रहु रे ॥ टेक ॥ रागदोष परकी उतपात, निहचै शुद्ध चेतनाजात ॥ मगन० ॥ १ ॥ विधि निषेधको खेद निवारि, आप आपमें आप निहारि ॥ मगन० ॥ २ ॥ बंध मोक्ष वि-कलप करि दूर, आनँदकन्द चिदातम सूर ॥ मगन० ॥ ३ ॥ दरसन ज्ञान चरन समुदाय, द्यानत ये ही मोक्ष उपाय ॥ मगन० ॥ ४ ॥

६६ ।

आतम जानो रे भाई ! ॥ टेक ॥ जैसी उज्जल आ-रसी[1] रे, तैसी आतम जोत । काया-करमनसों जुदी रे, सबको करै उदोत ॥ आतम० ॥ १ ॥ शयन दशा जागृत दशा रे, दोनों विकलपरूप । निरविकलप शुद्धातमा रे, चिदानंद चिद्रूप ॥ आतम० ॥ २ ॥ तन वचसेती भिन्न कर रे, मनसों निज लौं लाय । आप आप जब अनुभवै रे, तहां न मन वच काय ॥ आतम० ॥ ३ ॥ छहौं दरव नव तत्त्वतैं रे, न्यारो आ-तमराम । द्यानत जे अनुभव करैं रे, ते पावैं शिव-धाम ॥ आतम० ॥ ४ ॥

६७ ।

दरसन तेरा मन भावै ॥ दरसन० ॥ टेक ॥ तुमकौं

---

१ दर्पण ।

देखि त्रिपति नाहिं सुरपति, नैन हजार बनावै ॥ दरसन० ॥ १ ॥ समोसरनमें निरखै सचिपति, जीभ सहस गुन गावै । कोड़ कामको रूप छिपत है, तेरो दरस सुहावै ॥ दरसन० ॥ २ ॥ आँख लगै अंतर है तो भी, आनँद उर न समावै । ना जानों कितनों सुख हरिको, जो नाहिं पलक लगावै ॥ दरसन० ॥ ३ ॥ पाप नासकी कौन बात है, द्यानत सम्यक पावै । आसन ध्यान अनूपम स्वामी, देखैं ही बन आवै ॥ दरसन० ॥ ४ ॥

६८ ।

री ! मेरे घट ज्ञान घनागम छायो ॥ री० ॥ टेक ॥ शुद्ध भाव बादल मिल आये, सूरज मोह छिपायो ॥ री० ॥ १ ॥ अनहद घोर घोर गरजत है, भ्रम आताप मिटायो । समता चपला चमकनि लागी, अनुभौ-सुख झर लायो ॥ री० ॥ २ ॥ सत्ता भूमि बीज समकितको, शिवपद खेत उपायो । उद्धत (?) भाव सरोवर दीसै, मोर सुमन हरषायो ॥ री० ॥ ३ ॥ भव-प्रदेशतैं बहु दिन पीछैं, चेतन पिय घर आयो । द्यानत सुमति कहै सखियनसों, यह पावस मोहि भायो ॥ री० ॥ ४ ॥

६९ ।

हो स्वामी ! जगत जलधितैं तारो ॥ हो० ॥ टेक ॥

---

१ इन्द्र । २ इन्द्रको ।

मोह मच्छ अरु काम कच्छतैं, लोभ लहरतैं उब
॥ हो० ॥ १ ॥ खेद खारजल दुख दावानल, भ
भँवर भय टारो ॥ हो० ॥ २ ॥ द्यानत वार वार
भाषै, तू ही तारनहारो ॥ हो० ॥ ३ ॥

७० । राग—वसन्त ।

मोहि तारो हो देवाधिदेव, मैं मनवचतनकरि व
सेव ॥ टेक ॥ तुम दीनदयाल अनाथनाथ, हमहू
राखो आप साथ ॥ मोह० ॥ १ ॥ यह मारवाड़ सं
देश, तुम चरनकलपतरु हर कलेश ॥ मोह० ॥ २
तुम नाम रसायन जीय पीय, द्यानत अजरामर
त्रितीय ॥ मोह० ॥ ३ ॥

७१ । राग—केदारो ।

रे जिय! क्रोध काहे करै ॥ टेक ॥ देखकै अ
वेकि प्रानी, क्यों विवेक न धरै ॥ रे जिय० ॥ १
जिसे जैसी उदय आवै, सो क्रिया आचरै। सहज
अपनो विगारै, जाय दुर्गति परै ॥ रे जिय० ॥ २ ॥
संगति-गुन सबनिकों, सरब जग उच्चरै। तुम भले
भले सबको, बुरे लखि मति जरै ॥ रे जिय० ॥
वैद्य परविष हर सकत नाहिं, आप भखि को मरै।
कषाय निगोद-वासा, छिमा द्यानत तरै ॥ रे जिय० ।

---

१ इस पदमें दो पद्धरी छन्द हैं। २ स्वभाव।

७२ ।

फूली वसन्त जहँ आदीसुर शिवपुर गये ॥ टेक ॥ भारतभूप बहत्तर जिनगृह, कनकमयी सब निरमयें ॥ फूली० ॥ १ ॥ तीन चौबीस रतनमय प्रतिमा, अंग रंग जे जे भये । सिद्ध समान सीस सम सबके, अद्भुत शोभा परिनये ॥ फूली० ॥ २ ॥ वालि आदि आहूठ कोड़ मुनि, सबनि मुकति सुख अनुभये । तीन अठाई फागनि (?) खग मिल, गावैं गीत नये नये ॥ फूली० ॥३॥ वर्सु जोजन वसु पैड़ी (?) गंगा, फिरी बहुत सुरआलये । द्यानत सो कैलास नमौं हौं, गुन कापै जाँ बरनये ॥ फूली० ॥ ४ ॥

७३ ।

तुम ज्ञानविभव फूली वसन्त, यह मन मधुकर सुखसों रमन्त ॥ टेक ॥ दिन बड़े भये वैराग भाव, मिथ्यामत रजनीको घटाव ॥ तुम० ॥ १ ॥ बहु फूली फैली सुरुचि वेलि, ज्ञाताजन समता संग केलि ॥ तुम० ॥ २ ॥ द्यानत वानी पिक मधुररूप, सुरनरपशु-आनँदघनसुरूप ॥ तुम० ॥ ३ ॥

---

१ जहां (कैलाशगिरिपर) । २ वनवाये । ३ साड़े तीन कोटि । ४ आठ । ५ किससे । ६ जावें । ७ भ्रमर । ८ रात्रि । ९ कोयल ।

७४ ।

ज्ञानी जीव-दया नित पालैं ॥ टेक ॥ आरँभतैं पर-घात होत है, क्रोध घात निज टालैं ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ हिंसा त्यागि दयाल कहावै, जलै कषाय बदनमें । बाहिर त्यागी अन्तर दागी, पहुँचै नरकसदनमें॥ ज्ञानी० ॥ २ ॥ करै दया कर आलस भावी, ताको कहिये पापी । शांत सुभाव प्रमाद न जाकै, सो परमारथ-व्यापी ॥ ज्ञानी० ॥ ३ ॥ शिथिलाचार निरुद्यम रहना, सहना बहु दुख भ्राता । द्यानत बोलन डोलन जीमनं, करैं जतनसों ज्ञाता ॥ ज्ञानी० ॥ ४ ॥

७५ ।

कारज एक ब्रह्महीसेती ॥ टेक ॥ अंग संग नहिं बहिरभूत सब, धन दारा सामग्री तेती ॥ कारज० ॥ १ ॥ सोल सुरग नव ग्रैविकमें दुख, सुखित सातमें ततका वेती । जा शिवकारन मुनिगन ध्यावैं, सो तेरे घट आनँदखेती ॥ कारज० ॥ २ ॥ दान शील जप तप व्रत पूजा, अफल ज्ञान विन किरिया केती । पंच दरब तोतैं नित न्यारे, न्यारी रागदोष विधि जेती ॥ कारज० ॥ ३ ॥ तू अविनाशी जगपरकासी, द्यानत भासी

१ नरकरूपी घरमें । २ उद्योगहीन । ३ भोजन, भक्षण । ४ स्त्री । ५ सातवें नरकमें । ६ तत्त्वका जाननेवाला ।

सुकलावेती । तजौ लाल! मनके विकलप सब, अनुभव-मगन सुविद्या एती ॥ कारज० ॥ ४ ॥

७६ ।

चेतन खेलै होरी ॥ टेक ॥ सत्ता भूमि छिमा वसन्तमें, समता प्रानप्रिया सँग गोरी ॥ चेतन० ॥ १ ॥ मनको माट प्रेमको पानी, तामें करुना केसर घोरी । ज्ञान ध्यान पिचकारी भरिभरि, आपमें छोरै होरा होरी ॥ चेतन० ॥ २ ॥ गुरुके वचन मृदंग वजत हैं, नय दोनों डफ ताल टकोरी । संजम अतर विमल व्रत चोवा, भाव गुलाल भरै भर झोरी ॥ चेतन० ॥ ३ ॥ धरम मिठाई तप बहु मेवा, समरस आनँद अमल कटोरी । द्यानत सुमति कहै सखियनसों, चिरजीवो यह जुगजुग जोरी ॥ चेतन० ॥ ४ ॥

७७ ।

भोर भयो भज श्रीजिनराज, सफल होंहिं तेरे सब काज ॥ टेक ॥ धन सम्पत मनवांछित भोग, सब विधि आन वनें संजोग ॥ भोर० ॥ १ ॥ कल्पवृच्छ ताके घर रहै, कामधेनु नित सेवा वहै । पारस चिन्तामनि समुदाय, हितसों आय मिलैं सुखदाय ॥ भोर० ॥ २ ॥ दुर्लभतैं सुलभ्य ह्वै जाय, रोग सोग दुख दूर पलाय । सेवा देव करैं मन लाय, विघन उलट मंगल

१ इस पदकी सब तुकें १५ मात्राकी चौपाई होती हैं ।

ठहराय ॥ भोर० ॥ ३ ॥ डाँयन भूत पिशाच न छलै, राजचोरको जोर न चलै । जस आदर सौभाग्य प्रकास, द्यानत सुरग मुकतिपदवास ॥ भोर० ॥ ४ ॥

७८

आयो सहज वसन्त खेलैं सब होरी होरा ॥ टेक ॥ उत बुधि दया छिमा वहु ठाढ़ीं, इत जिय रतन सजै गुन जोरा ॥ आयो० ॥ १ ॥ ज्ञान ध्यान डफ ताल वजत हैं, अनहद शब्द होत घनघोरा । धरम सुराग गुलाल उड़त है, समता रंग दुहूंने घोरा ॥ आयो० ॥ २ ॥ परसन[1] उत्तर भरि पिचकारी, छोरत दोनों करि करि जोरा । इततैं[2] कहैं नारि तुम काकी[3], उततैं[4] कहैं कौनको छोरा[5] ॥ आयो० ॥ ३ ॥ आठ काठ अनुभव पावकमें, जल बुझ शांत भई सब ओरा । द्यानत शिव आनन्दचन्द छवि, देखैं सज्जन नैन चकोरा ॥ आयो० ॥ ४ ॥

७९ ।

अजितनाथसों मन लावो रे ॥ टेक ॥ करसों ताल वचन मुख भाषौ, अर्थमें चित्त लगावो रे ॥ अजित० ॥ १ ॥ ज्ञान दरस सुख बल गुनधारी, अनन्त चतुष्टय ध्यावो रे । अवगाहना अवाध अमूरत, अगुरु अलघु

---

१ प्रश्न । २ इधरसे । ३ किसकी ? । ४ उधरसे । ५ लड़का ।

वतलावो रे ॥ अजित० ॥ २ ॥ करुनासागर गुनरतनागर, जोतिउजागर भावो रे । त्रिभुवननायक भवभयघायक, आनँददायक गावो रे ॥ अजित० ॥ ३ ॥ परमनिरंजन पातकभंजन, भविरंजन ठहरावो रे । द्यानत जैसा साहिब सेवो, तैसी पदवी पावो रे ॥ अजित० ॥ ४ ॥

८० । राग—आसावरी ।

अब हम अमर भये न मरैंगे ॥ टेक ॥ तन-कारन मिथ्यात दियो तज, क्यों करि देह धरैंगे ॥ अब० ॥ १ ॥ उपजै मरै कालतैं प्रानी, तातैं काल हरैंगे । राग दोष जग बंध करत हैं, इनको नाश करैंगे ॥ अब० ॥ २ ॥ देह विनाशी मैं अविनाशी, भेदज्ञान पकरैंगे । नासी जासी हम थिरवासी, चोखे हो निखरैंगे ॥ अब० ॥ ३ ॥ मरे अनन्त वार विन समझैं, अब सब दुख विसरैंगे । द्यानत निपट निकट दो अक्षर, विन सुमरैं सुमरैंगे ॥ अब० ॥ ४ ॥

८१ । राग—आसावरी ।

भाई ! ज्ञानी सोई कहिये ॥ टेक ॥ करम उदय सुख दुख भोगतैं, राग विरोध न लहिये ॥ भाई० ॥ १ ॥ कोऊ ज्ञान क्रियातैं कोऊ, शिवमारग वतलावै ।

---

१ रत्नोंकी खानि । २ शुद्धचिदानंद । ३ "आत्मा" ।

नय निहचै विवहार साधिकै, दोऊ चित्त रिझावै ॥ भाई० ॥ २ ॥ कोई कहै जीव छिनभंगुर, कोई नित्य बखानै । परजय दरवित नय परमानै, दोऊ समता आनै ॥ भाई० ॥ ३ ॥ कोई कहै उदय है सोई, कोई उद्यम बोलै । द्यानत स्यादवाद सुतुलमें, दोनों वस्तैं तोलै ॥ भाई० ॥ ४ ॥

८२ । राग—आसावरी ।

भाई ! कौन धरम हम पालैं ॥ टेक ॥ एक कहैं जिहि कुलमें आये, ठाकुरको कुल गालैं ॥ भाई० ॥१॥ शिवमत बौध सु वेद नयायक, मीमांसक अरु जैना । आप सराहैं आगम गाहैं, काकी सरधा ऐना ॥ भाई० ॥ २ ॥ परमेसुरपै हो आया हो, ताकी बात सुनी जै । पूछैं बहुत न बोलैं कोई, बड़ी फिकर क्या कीजै ॥ भाई० ॥ ३ ॥ जिन सब मतके मत संचय करि, मारग एक बताया । द्यानत सो गुरु पूरा पाया, भाग हमारा आया ॥ भाई० ॥ ४ ॥

८३ । राग—गौरी ।

हमारो कारज कैसें होय ॥ टेक ॥ कारण पंच मुकति मारगके, तिनमेंके हैं दोय ॥ हमारो० ॥ १ ॥ हीन संघनन लघु आयूषा, अल्प मनीषा जोय । कच्चे

---

१ उत्तम तराजूमें । २ वस्तुएँ । ३ किसकी । ४ बुद्धि ।

भाव न सचे साथी, सब जग देख्यो टोय ॥ हमारो० ॥ २ ॥ इंद्री पंच सुविषयनि दौरैं, मानैं कह्या न कोय । साधारन[1] चिरकाल वस्यो मैं, धरम विना फिर सोय ॥ हमारो० ॥ ३ ॥ चिन्ता वड़ी न कछु बनि आवै, अब सब चिन्ता खोय । द्यानत एक शुद्ध निजपद लखि, आपमें आप समोय ॥ हमारो० ॥ ४ ॥

८४ । राग—गौरी ।

हमारो कारज ऐसें होय ॥ टेक ॥ आतम आतम पर पर जानैं, तीनौं संशय खोय ॥ हमारो० ॥ १ ॥ अंत समाधिमरन करि तन तजि, होय शक्र[2] सुरलोय विविध भोग उपभोग भोगवै, धरमतनों फल सोय ॥ हमारो० ॥ २ ॥ पूरी आयु विदेह भूप ह्वै, राज सम्पदा भोय[3] । कारण पंच लहै गहै दुद्धर, पंच महाव्रत जोय ॥ हमारो० ॥ ३ ॥ तीन जोग थिर सहै परीसह, आठ करम मल धोय । द्यानत सुख अनन्त शिव विलसै, जनमैं मरै न कोय ॥ हमारो० ॥ ४ ॥

८५ । राग—गौरी ।

देखो ! भाई श्रीजिनराज विराजैं ॥ टेक ॥ कंचन-मनिमय सिंहपीठपर, अन्तरीछ[4] प्रभु छाजैं ॥ देखो० ॥ १ ॥ तीन छत्र त्रिभुवन जस जंपैं, चौंसठि चमर

---

१ साधारण वनस्पति । २ इन्द्र । ३ भोगकर । ४ अधर निरालंब ।

समाजैं । वानी जोजन घोर मोर सुनि, डर अँहि[1] पातक भाजैं ॥ देखो० ॥ २ ॥ साड़े बारह कोड़ दुंदुभी, आदिक बाजे बाजैं । वृक्ष अशोक दिपत भामण्डल, कोड़ि सूर[2] शशि लाजैं ॥ देखो० ॥ ३ ॥ पहुपवृष्टि जलकन मंद पवन, इंद्र सेव नित साजैं । प्रभु न बुलावैं द्यानत जावैं, सुरनर पशु निज काजैं ॥ देखो० ॥ ४ ॥

८६ । राग—गौरी ।

देखो भाई! आतमराम विराजै ॥ टेक ॥ छहों दरव नव तत्त्व ज्ञेय हैं, आप सुज्ञायक छाजै ॥ देखो० ॥ १ ॥ अर्हत सिद्ध सूरि गुरु मुनिवर, पाचौं पद जिहि-माहीं । दरसन ज्ञान चरन तप जिहिमें, पटतर कोऊ नाहीं ॥ देखो० ॥ २ ॥ ज्ञान चेतना कहिये जाकी, बाकी पुद्‌गलकेरी । केवलज्ञान विभूति जासुकै, आन विभौ भ्रमचेरी ॥ देखो० ॥ ३ ॥ एकेन्द्री पंचेन्द्री पुद-गल, जीव अतिन्द्री ज्ञाता । द्यानत ताही शुद्ध दरवको जानपनो सुखदाता ॥ देखो० ॥ ४ ॥

८७ । राग—गौरी ।

अब मोहि तार लेहु महावीर ॥ टेक ॥ सिद्धारथ-नन्दन जगवंदन, पापनिकन्दन धीर ॥ अब० ॥ १ ॥ ज्ञानी ध्यानी दानी जानी, वानी गहर गँभीर । मोपके

---

१ सर्प । २ सूर्य ।

कारन दोषनिवारन, रोषविदारन धीर ॥ अब० ॥ २ ॥ आनँदपूरत समतासूरत, चूरत आपद पीर । बालजती दृढ़व्रती समकिती, दुखदावानलनीर ॥ अब० ॥ ३ ॥ गुन अनन्त भगवन्त अन्त नहिं, शशि कपूर हिम हीर । द्यानत एक हु गुन हम पावैं, दूर करैं भवभीर ॥ अब० ॥ ४ ॥

८८ । राग—गौरी ।

जय जय नेमिनाथ परमेश्वर ॥ टेक ॥ उत्तम पुरुषनिको अति दुर्लभ, बालशीलधरनेश्वर ॥ जय० ॥ १ ॥ नारायन बहु भूप सेव करैं, जय अघतिमिरदिनेश्वर । तुम जस महिमा हम कहा जानैं, भाखि न सकत सुरेश्वर ॥ जय० ॥ २ ॥ इन्द्र सबै मिल पूजैं ध्यावैं, जय भ्रमतपतनिशेश्वर । गुन अनन्त हम अन्त न पावैं, वरन न सकत गनेश्वर ॥ जय० ॥ ३ ॥ गणधर सकल करैं थुति ठाढ़े, जय भव-जल-पोतेश्वर । द्यानत हम छद्मस्थ कहा कहैं, कह न सकत सरवेश्वर ॥ जय० ॥ ४ ॥

८९ । राग—गौरी ।

आदिनाथ तारन तरनं ॥ टेक ॥ नाभिरायमरुदेवीनन्दन, जनम अयोध्या अघहरनं ॥ आदि० ॥ १ ॥

---

१ क्रोध । २ मूर्ति । ३ बरफ । ४ सूर्य । ५ चंद्रमा । ६ गणधर । ७ श्रेष्ठजहाजसदृश ।

कलपवृच्छ गये जुगल दुखित भये, करमभूमि विधि सुखकरनं । अपछर नृत्य मृत्य लखि चेते, भव तन भोग जोग धरनं ॥ आदि० ॥ २ ॥ कायोत्सर्ग छमास[1] धस्यो दिढ़, वन खग[2] मृग पूजत चरनं । धीरजधारी वरसअहारी, सहस वरस तप आचरनं ॥ आदि० ॥३॥ करम नासि परगासि[3] ज्ञानको, सुरपति कियो समोसरनं[4] । सव जन सुख दे शिवपुर पहुँचे, द्यानत भवि तुम पद शरनं ॥ आदि० ॥ ४ ॥

९० । राग—गौरी ।

सैली जयवन्ती यह हूजो ॥ टेक ॥ शिवमारगको राह वतावे, और न कोई दूजो ॥ सैली० ॥ १ ॥ देव धरम गुरु साँचे जानै, झूठो मारग त्याग्यो । सैलीके परसाद हमारो, जिनचरनन चित लाग्यो ॥ सैली० ॥ २ ॥ दुख चिरकाल सह्यो अति भारी, सो अव सहज विलायो । दुरितहरन[5] सुखकरन मनोहर, धरम पदारथ पायो ॥ सैली० ॥ ३ ॥ द्यानत कहै सकल सन्तनको, नित प्रति प्रभुगुन गावो । जैनधरम परवान ध्यानसौं, सव ही शिवसुख पावो ॥ सैली० ॥ ४ ॥

---

१ छह महीने । २ पक्षी । ३ प्रगटकर । ४ साधर्मियोंकी मण्डली । ५ पाप ।

९१ । राग—सोरठ ।

देखो ! भेक[1] फूल लै निकस्यो, विन पूजा फल पायो ॥ टेक ॥ हरषित भाव मर्यो गजपगतल, सुरगत अमर कहायो ॥ देखो० ॥ १ ॥ मालिनि-सुता देहली पूजी, अपछर इन्द्र रिझायो । हाली चरुसों दृढ़व्रत पाल्यो, दारिद तुरत नसायो ॥ देखो० ॥ २ ॥ पूजा टहल करी जिन पुरुषनि, तिन सुरभवन वनायो । चक्री भरत नयौ[2] जिनवरको, अवधिज्ञान उपजायो ॥ देखो० ॥ ३ ॥ आठ दरव लै प्रभुपद पूजै, ता पूजन सुर आयो । द्यानत आप समान करत हैं, सरधासों सिर नायो ॥ देखो० ॥ ४ ॥

९२ । राग—सोरठ ।

भाई ! आपन पाप कमाये आये, क्यों न परीसह सहिये ॥ टेक ॥ आगैं नूतन वंध रुकत है, पूरव करमनि दहिये ॥ भाई० ॥ १ ॥ न्यौति जिमाया जिनको चहिये, घर आये नाहिं गहिये । पर-वश तो सब जीव सहत हैं, स्ववश सहैं धंनि[3] कहिये ॥ भाई० ॥ २ ॥ ऋणके दाम भेज घर दीजे, माँगैं क्यों ले रहिये । कोटिजनमतपदुर्लभ जे-पद, ते पद सहज हिं लहिये ॥ भाई० ॥ ३ ॥ दोष दुष्ट धन लेहु लालची, प्रान जास

१ मेंडक । २ प्रणाम किया । ३ धन्य ।

बात कहूं चितमें जब आवै, तुम अन्तरकी जानौं। दीनदयाल निकाल जगततैं, द्यानत दास पिछानौं॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

९३।

वंदे तू वंदगी कर याद ॥ टेक ॥ जिन कामोंमें तू लगा है, वे वातें सब वाद[1] ॥ वंदे० ॥ १ ॥ कौन तेरा तू है किसका, एकला सु अनाद। लोकरंजनके लिये ना, पड़ि करमके नाद ॥ वंदे० ॥२॥ भोजन आसन नींद सुदिढ़, छोड़ दे उनमाद[2]। संग त्याग सु सदा जाग रे. भज समाधीस्वाद ॥ वंदे० ॥ ३ ॥ जीवत मृतक हो रहा है, तजिये हरप विपाद। द्यानत ब्रह्मज्ञानसुख रमिये, ना करिये वकवाद ॥ वंदे० ॥ ४ ॥

९४।

वंदे! तू वंदगी ना भूल ॥ टेक ॥ चाहता है सुख पोपिवेको, यह तौ सूल उसूल ॥ वंदे० ॥ १ ॥ जो कोई तुझे सूल[3] वोवै, वो उसे तू फूल। तुझे फूलके फूल होंगे, उसे सूलके सूल॥ वंदे० ॥ २ ॥ आया है क्या लेके वंदे, क्या ले जायगा धूल। कर खैरातें[4] साहिबके नामसे, पाप जलै ज्यों तूल ॥ वंदे० ॥ ३ ॥ एक साइत फरामोसन हूजै, सीख सुनो यह मूल। द्यानत पाक वेएव साहिवके, नामको कर कुबूल ॥ वंदे ॥ ४ ॥

---

१ वथा। २ उन्मत्तता। ३ कांटे। ४ दान।

९५ ।

आतमरूप सुहावना, कोई जानै रे भाई । जाके जानत पाइये, त्रिभुवनठकुराई ॥ टेक ॥ मन इन्द्री न्यारे करौ, मन और विचारौ । विषय विकार सबै मिटैं, सहजैं सुख धारौ ॥ आतम० ॥ १ ॥ बाहिरतैं मन रोककैं, जब अन्तर आया । चित्त कमल सुलट्यो तहाँ, चिनमूरति पाया ॥ आतम० ॥ २ ॥ पूरक कुंभक रेचतैं, पहिलैं मन साधा । ज्ञान पवन मन एकता, भई सिद्ध समाधा ॥ आतम० ॥ ३ ॥ जिनि इहि विध मन वश किया, तिन आतम देखा । द्यानत मौनी व्है रहे, पाई सुखरेखा ॥ आतम० ॥ ४ ॥

९६ । राग—सोरठ ।

भाई ! ज्ञानका राह दुहेला[1] रे ॥ भाई० ॥ टेक ॥ मैं ही भगत बड़ा तपधारी, ममता गृह झकझेला रे ॥ भाई० ॥ १ ॥ मैं कविता सब कवि सिरऊपर, बानी पुद्गल-मेला रे । मैं सब दानी मांगै सिर द्यौं, मिथ्याभाव सकेला रे ॥ भाई० ॥२॥ मृतक देह बस फिर तन आऊं, मार जिवाऊं छेला रे । आप जलाऊं फेर दिखाऊं, क्रोध लोभतैं खेला रे ॥ भाई० ॥ ३ ॥ वचन सिद्ध भाषै सोई है, प्रभुता वेलन वेला रे । द्यानत चंचल चित पारा थिर, करै सुगुरुका चेला रे ॥ भाई० ॥ ४ ॥

---

१ कठिन—दुर्धर ।

९७

भाई ! ज्ञानका राह सुहेला[1] रे ॥ भाई० ॥ टेक ॥ दरव न चहिये देह न दहिये, जोग भोग न नवेला रे ॥ भाई० ॥ १ ॥ लड़ना नाहीं मरना नाहीं, करना वेला तेला रे । पढ़ना नाहीं गढ़ना नाहीं, नाच न गावन मेला रे ॥ भाई० ॥ २ ॥ न्हानां[2] नाहीं खाना नाहीं. नाहिं कमाना धेला रे । चलना नाहीं जलना नाहीं, गलना नाहीं देला रे ॥ भाई० ॥ ३ ॥ जो चित चाहै सो नित दाहै, चाह दूर करि खेला रे । द्यानत यामें कौन कठिनता, वे परवाह अकेला रे ॥ भाई० ॥ ४ ॥

९८ ।

प्रभु तेरी महिमा किहि मुख गावैं ॥ टेक ॥ गरभ छमास अगाउ कनक नग (?) सुरपति नगर वनावैं ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ क्षीर उदधि जल मेरु सिंहासन, मल मल इन्द्र न्हुलावैं[3] । दीक्षा समय पालकी वैठो, इन्द्र कहार कहावैं ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ समोसरन रिध ज्ञान महातम, किहिविधि सरव वतावैं । आपन जातकी वात कहा शिव, वात सुनैं भवि जावैं ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥ पंच कल्यानक थानक स्वामी, जे तुम मन वच ध्यावैं । द्यानत तिनकी कौन कथा है, हम देखैं सुख पावैं ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

---

१ सहज । २ स्नान करना । ३ अभिषेक करावें ।

९९

प्रभु तेरी महिमा कहिय न जाय ॥ टेक ॥ थुति करि सुखी दुखी निंदातैं, तेरैं समता भाय ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ जो तुम ध्यावै थिर मन लावै, सो किंचित् सुख पाय । जो नहिं ध्यावै ताहि करत हो, तीन भवनको राय ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ अंजन चोर महाअपराधी, दियो स्वर्ग पहुँचाय । कथानाथ श्रेणिक समदृष्टी, कियो नरक दुखदाय ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥ सेव असेव कहा चलै जियकी, जो तुम करो सु न्याय । द्यानत सेवक गुन गहि लीजै, दोष सबै छिटकाय ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

१०० । राग–विलावल ।

प्रभु तुम सुमरनहीमैं तारे ॥ टेक ॥ सूअर सिंह नौलै[1] वानरने, कहौ कौन व्रत धारे ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ सांप जाप करि सुरपद पायो, स्वान स्याल भय जारे । भेकै[2] बोकै[3] गज अमर कहाये, दुरगति भाव विदारे ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ भील चोर मातंगै[4] जु गनिका, बहुतनिके दुख टारे । चक्री भरत कहा तप कीनौ, लोकालोक निहारे ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥ उत्तम मध्यम भेद न कीन्हों, आये शरन उबारे । द्यानत राग दोष विन स्वामी, पाये भाग हमारे ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

---

१ न्योला । २ मेंडक । ३ बकरा । ४ चांडाल ।

१०१ । राग-भैरों ।

ऐसो सुमरन कर मेरे भाई, पवन थँभै मन कितहूँ न जाई ॥ टेक ॥ परमेसुरसों साँच रही जै, लोकरंजना भय तज दीजै ॥ ऐसो० ॥ १ ॥ जंम अरु नेम दोउ विधि धारो, आसन प्राणायाम सँभारो । प्रत्याहार धारना कीजै, ध्यान-समाधि-महारस पीजै ॥ ऐसो० ॥ २ ॥ सो तप तपो बहुरि नहिं तपना, सो जप जपो बहुरि नहिं जपना । सो व्रत धरो बहुरि नहिं धरना, ऐसे मरो बहुरि नहिं मरना ॥ ऐसो० ॥ ३ ॥ पंच परावर्तन लखि लीजै, पांचों इन्द्रीको न पतीजै । द्यानत पांचों लच्छि लहीजै, पंच परम गुरु शरन गहीजै ॥ ऐसो० ॥४॥

१०२ । राग-विलावल ।

कहिवेकों मन सूरँसा, करवेकों काचा ॥ टेक ॥ विपय छुड़ावै औरपै, आपन अति माँचा ॥ कहिवे० मिश्री मिश्रीके कहैं, मुँह होय न मीठा । नीम कहैं मुख कटु हुआ, कहुँ सुना न दीठा ॥ कहिवे० ॥ २ ॥ कहनेवाले बहुत हैं, करनेकों कोई । कथनी लोक-रिझावनी, करनी हित होई ॥ कहिवे० ॥ ३ ॥ कोड़ि जनम कथनी कथै, करनी विनु दुखिया । कथनी विनु करनी करै, द्यानत सो सुखिया ॥ कहिवे० ॥ ४ ॥

---

१ यम । २ नियम । ३ विश्वास कीजिये । ४ शूरवीर । ५ मग्न हुआ । ६ देखा ।

१०३ । राग—विलावल ।

श्रीजिननाम अधार, सार भजि ॥ टेक ॥ अगम अतट संसार उदधितैं, कौन उतारै पार ॥ श्रीजिन० ॥ १ ॥ कोटि जनम पातक कटैं, प्रभु नाम लेत इक वार । ऋद्धि सिद्धि चरननिसों लागै, आनँद होत अपार ॥ श्रीजिन० ॥ २ ॥ पशु ते धन्य धन्य ते पंखी, सफल करैं अवतार । नाम विना धिक् मानवको[1] भव, जल वल व्है है छार ॥ श्रीजिन० ॥ ३ ॥ नाम समान आन नाहिं जग सब, कहत पुकार पुकार । द्यानत नाम तिहूँ-पन जपि लै, सुरगमुकतिदातार ॥ श्रीजिन० ॥ ४ ॥

१०४ ।

देखे सुखी सम्यकवान ॥ टेक ॥ सुख दुखको दुखरूप विचारैं, धारैं अनुभवज्ञान ॥ देखे० ॥ १ ॥ नरक सातमेंके दुख भोगैं, इन्द्र लखैं तिन[2]-मान । भीख मांगकै उदर भरैं, न करैं चक्रीको ध्यान ॥ देखे० ॥ २ ॥ तीर्थंकर पदकों नाहिं चावैं, जदपि उदय अप्रमान । कुष्ट आदि वहु व्याधि दहत न, चहत मकरध्वज[3]-थान ॥ देखे० ॥ ३ ॥ आधि व्याधि निरबाध अनाकुल, चेतनजोति पुमान । द्यानत मगन सदा तिहि-माहीं, नाहीं खेद निदान ॥ देखे० ॥ ४ ॥

---

१ मनुष्यभव । २ तिनकेके वरावर । ३ कामदेव ।

१०५।

सव जगको प्यारा, चेतनरूप निहारा ॥ टेक ॥ दरव भाव नो करम न मेरे, पुदगल दरव पसारा ॥ सव० ॥ १ ॥ चार कषाय चार गति संज्ञा, बंध चार परकारा। पंच वरन रस पंच देह अरु, पंच भेद संसारा ॥ सव० ॥ २ ॥ छहों दरव छह काल छलेश्या, छमत भेदतैं पारा। परिग्रह मारगना गुन-थानक, जीवथानसों न्यारा ॥ सव० ॥ ३ ॥ दरसनज्ञानचरनगुनमण्डित, ज्ञायक चिह्न हमारा। सोऽहं सोऽहं और सु औरै, द्यानत निहचै धारा ॥ सव० ॥ ४ ॥

१०६। राग—विहागरा।

जो तैं आतमहित नहिं कीना ॥ टेक ॥ रामा रामा धन धन कीना, नरभव फल नहिं लीना ॥ जो तैं० ॥ १ ॥ जप तप करकैं लोक रिझाये, प्रभुताके रस भीनाँ। अंतर्गत परिनाम न सोधे, एको गरज सरी ना ॥ जो तैं० ॥ २ ॥ वैठि सभामें वहु उपदेशे, आप भये परवीना। ममता डोरी तोरी नाहीं, उत्तमतैं भये हीना ॥ जो तैं० ॥ ३ ॥ द्यानत मन वच काय लायकै, जिन अनुभव चित दीना। अनुभव धारा ध्यान विचारा, मंदर कलश नवीना ॥ जो तैं० ॥ ४ ॥

---

१ पट्मत। २ मार्गणा। ३ स्त्री। ४ मगन होकर। ५ एक भी। ६ सिद्ध न हुई।

१०७ । राग—विलावल ।

ऋषभदेव जनम्यौ धन घरी ॥ टेक ॥ इन्द्र नचैं गंधर्व वजावैं, किन्नर बहु रस भरी ॥ ऋषभ० ॥ १ ॥ पट आभूषन पुहुपमालसों[1], सहसवाहु सुरतरु[2] व्है हरी। दश अवतार स्वांग विधि पूरन, नाच्यो शक्र[3] भगति उर धरी॥ ऋषभ० ॥ २ ॥ हाथ हजार सवनिपै अपछर, उछरत नभमें[4] चहुँदिशि फरी । करी करन अपछरी उछारत, ते सव नटैं गगनमें[5] खरी ॥ ऋषभ० ॥ ३ ॥ प्रगट गुपत भूपर अंवरमें, नाचैं सवै अमर[6] अमरी[7] । द्यानत घर चैत्यालय कीनौं, नाभिरायजी हो लहरी ॥ ऋषभ० ॥ ४ ॥

१०८ । ✓

मानुष जनम सफल भयो आज ॥ टेक ॥ सीस सफल भयो ईस[8] नमत ही, श्रवन सफल जिनवचन समाज ॥ मानुष० ॥ १ ॥ भाल[9] सफल जु दयाल तिलकतैं, नैन सफल देखे जिनराज । जीभ सफल जिनवानि गानतैं, हाथ सफल करि पूजन आज ॥ मानुष० ॥ २ ॥ पाँय[10] सफल जिन भौन गौनतैं[11], काय सफल नाचैं वल गाज । वित्त[12] सफल जो प्रभुकौं लागै, चित्त

१ फूलोंकी माला । २ कल्पवृक्ष । ३ इन्द्र । ४ आकाशमे । ५ आकाशमे । ६ देव । ७ देवाङ्गना । ८ ईश्वर, अरहन्तदेव । ९ ललाट । १० पाव । ११ जानेसे । १२ द्रव्य ।

सफल प्रभु ध्यान इलाज ॥ मानुष० ॥ ३ ॥ चिन्तामनि चिंतित-वर-दाई, कलपवृच्छ कलपनतैं काज । देत अचिंत अकलप महासुख, द्यानत भक्ति गरीबनिवाज ॥ मानुष० ॥ ४ ॥

१०९ । राग—ख्याल ।

री चल वंदिये चल वंदिये, री, महावीर जिनराय ॥ पाप निकन्दिये महावीर जिनराय, वारी वारी महिमा कहिय न जाय ॥ टेक ॥ विपुलाचल परवतपर आया, समवसरन बहु भाय ॥ री चलि० ॥ १ ॥ गौतमरिखसे[1] गनधर जाके, सेवत सुरनर पाय ॥ री चल० ॥ २ ॥ बिल्ली मूसे गाय सिंहसों, प्रीति करै मन लाय ॥ री चल० ॥ ३ ॥ भूपतिसहित चेलना रानी, अंग अंग हुलसाय ॥ री चल० ॥ ४ ॥ द्यानत प्रभुको दरसन देखैं, सुरग मुकति सुखदाय ॥ री चल० ॥ ५ ॥

११० । राग—सारंग ।

मेरे मन कब ह्वै है वैराग ॥ टेक ॥ राज समाज अकाज विचारौं, छारौं विषय कारे नाग ॥ मेरे० ॥ १ ॥ मंदिर वास उदास होयकैं, जाय वसौं वन बाग ॥ मेरे० ॥ २ ॥ कब यह आसा कांसा फूटै, लोभ भाव जाय भाग ॥ मेरे० ॥ ३ ॥ आप समान सबै जिय जा-

---

१ ऋषिसरीखे ।

नौं, राग दोषकों त्याग ॥ मेरे० ॥ ४ ॥ द्यानत यह विधि जब बनि आवै, सोई घड़ी बड़भाग ॥ मेरे० ॥५॥

१११ । राग–ख्याल ।

लागा आतमरामसों नेहरा ॥ टेक ॥ ज्ञानसहित मरना भला रे, छूट जाय संसार । धिक! परौ यह जीवना रे, मरना वारंवार ॥ लागा० ॥ १ ॥ साहिब साहिब मुंहतैं कहते, जानैं नाहीं कोई । जो साहिबकी जाति पिछानैं, साहिब कहिये सोई ॥ लागा० ॥ २ ॥ जो जो देखौ नैनोंसेती, सो सो विनसै जाई । देखनहारा मैं अविनाशी, परमानन्द सुभाई ॥ लागा० ॥३॥ जाकी चाह करैं सब प्रानी, सो पायो घटमाहीं । द्यानत चिन्तामनिके आये, चाह रही कछु नाहीं ॥ लागा० ॥ ४ ॥

११२ । राग–गौरी ।

सबको एक ही धरम सहाय ॥ टेक ॥ सुर नर नारक तिरयक् गतिमें, पाप महा दुखदाय ॥ सबको० ॥ १ ॥ गज हरि[1] दह अहि[2] रण गद[3] वारिधि[4], भूपति भीर पलाय । विघन उलटि आनन्द प्रगट ह्वै, दुलभ सुलभ ठहराय ॥ सबको० ॥ २ ॥ शुभतैं दूर बसत ढिग आवै, अघतैं करतैं जांय । दुखिया धर्म करत दुख नासै, सुखिया सुख अधिकाय ॥ सबको० ॥ ३ ॥ ताड़न

१ सिंह । २ सर्प । ३ बीमारी । ४ समुद्र ।

तापन छेदन कसना, कनकपरीच्छा भाय। द्यानत देव धरम गुरु आगम, परखि गहो मनलाय॥ सबको०॥४॥

११३ । राग—गौरी ।

तुमको कैसे सुख ह्वै मीत ! ॥ टेक ॥ जिन विषयनि सँग बहु दुख पायो, तिनहीसों अति प्रीति ॥ तुमको० ॥ १ ॥ उद्यमवान बाग चलनेको, तीरथसों भयभीत । धरम कथा कथनेको मूरख, चतुर मृषा-रस-रीत ॥ तुमको० ॥ २ ॥ नाट विलोकनमें बहु समझौ, रंच न दरस-प्रतीत। परमागम सुन ऊंघन लागौ, जागौ विकथा गीत ॥ तुमको० ॥ ३ ॥ खान पान सुनके मन हरपै, संजम सुन ह्वै ईत । द्यानत तापर चाहत हौगे, शिवपद सुखित निचीत ॥ तुमको० ॥ ४ ॥

११४ ।

वीर ! री पीर कासों कहिये ॥ टेक ॥ ऐश्वर्य अनूपम अचल मुकति गति, छांड़ि चहूँगति दुख क्यों सहिये ॥ वीर० ॥ १ ॥ चेतन अमल शरीर मलिन जड़, तासों प्रीति कहौ क्यों चहिये । अनुभव अम्रत विषय विषम फल, त्यागि सुधारस विष क्यों गहिये ॥ वीर० ॥ २ ॥ तिहुँ जगठाकर रतनत्रयनिधि, चाकर

---

१ बगीचेकी सैर करनेको तयार। २ झूठ। ३ नाटक। ४ जिनदर्शन। ५ निश्चिन्त। ६ नित्य, स्थिर। ७ अमृत।

दीन भये क्यों रहिये । द्यानत पीर सुलटि प्रभु भेपजं, रोम रोम आनँद लौं लहिये ॥ वीर० ॥ ३ ॥

११५ । राग—वसन्त ।

कहै राघौ सीता ! चलहु गेह ॥ टेक ॥ नैननिमें आय रह्यो सनेह ॥ कहै० ॥ १ ॥ हमऊपर तो तुम हो उदास, किन देखो सुतमुख चन्द्रभास ॥ कहै ॥ २ ॥ लछमन भामण्डल हनूं आय, सव विनती करि लगि रहे पाय ॥ कहै० ॥ ३ ॥ द्यानत कछु दिन घर करो वास, पीछैं तप लीज्यो मोह नास ॥ कहै० ॥ ४ ॥

११६ । राग—वसन्त ।

कहै सीताजी सुनो रामचन्द ॥ टेक ॥ संसार महादुखवृच्छकन्द ॥ कहै० ॥ १ ॥ पंचेद्री भोग भुजंग जानि, यह देह अपावन रोगखानि ॥ कहै० ॥ ॥ २ ॥ यह राज रजमयी पापमूल, परिग्रह आरँभमें खिन न भूल ॥ कहै० ॥ ३ ॥ आपद सम्पद घर वंधु गेह, सुत संकल फाँसी नारि नेह ॥ कहै० ॥ ४ ॥ जिय रुल्यो निगोद अनन्त काल, विनु जानैं ऊरध मधि पाताल ॥ कहै० ॥ ५ ॥ तुम जानत करत न आप काज, अरु मोहि निपेधो क्यों न लाज ॥ कहै० ॥

---

१ दवाई । २ रघुवर, रामचन्द्र । ३ हनुमान् ।

॥ ६ ॥ तब केश उपारि सबै खिमाय, दीक्षा धरि कीन्हौं तप सुभाय ॥ कहै० ॥ ७ ॥ द्यानत ठारै दिन ले सन्यास, भयो इन्द्र सोलहैं सुरग वास ॥ कहै० ॥ ८ ॥

११७। राग—बसन्त।

भवि कीजे हो आतमसँभार ॥ टेक ॥ राग दोष परिनाम डार ॥ भवि० ॥ १ ॥ कौन पुरुष तुम कौन नाम, कौन ठौर करो कौन काम ॥ भवि० ॥ २ ॥ समय समयमें बंध होय, तू निचिन्त न बारै कोय ॥ भवि० ॥ ३ ॥ जब ज्ञान पवन मन एक होय, द्यानत सुख अनुभवै सोय ॥ भवि० ॥ ४ ॥

११८।

अपनो जानि मोहि तार ले, स्वामी शान्ति कुंथु अर[2] देव ॥ टेक ॥ अपनो जानकै भक्त पिछानकै, सुरपति कीनीं सेव ॥ कामदेव जिन चक्रवर्तिपद, तीन भोग स्वयमेव ॥ अपनो० ॥ १ ॥ तीन कल्यानक हथनापुरमें, गरभ जनम तप भेव। दशौं दिशा दश धर्म प्रकाश्यो, नास्यो अघ तम एव ॥ अपनो० ॥ २ ॥ सहस अठोतर नाम सुलच्छन, अच्छैं[3] विना सुख वेव। द्यानतदास आस प्रभु तेरी, नास जनम मृतें टेव ॥ अपनो० ॥ ३ ॥

---

१ क्षमा मांगकर। २ अरनाथ तीर्थंकर। ३ इन्द्रिय। ४ मरणा।

११९ ।

जिनके भजनमें मगन रहु रे ! ॥ टेक ॥ जो छिन खोवै वातनिमांहिं, सो छिन भजन करैं अघ जाहिं ॥ मगन० ॥ १ ॥ भजन भला कहतैं क्या होय, जाप जपैं सुख पावै सोय ॥ मगन० ॥ २ ॥ बुद्धि न चहिये तन दुख नाहिं, द्रव्य न लागै भजनकेमाहिं ॥ मगन० ॥३॥ षट दरसनमें नाम प्रधान, द्यानत जपैं बड़े धनमान ॥ मगन० ॥ ४ ॥

१२० ।

भैया ! सो आतम जानो रे ! ॥ टेक ॥ जाके वसतैं वसत है रे, पाँचों इन्द्री गाँव । जास विना छिन एकमें रे, गाँव न नाँव न ठाँव[1] ॥ भैया० ॥ १ ॥ आप चलै अरु ले चलै रे, पीछैं सौ मन भार । ता विन गज हल ना सकै रे, तन खींचै संसार ॥ भैया० ॥ २ ॥ जाको जारैं[2] मारतैं रे, जरै मरै नाहिं कोय । जो देखै सब लोकको रे, लोक न देखै सोय ॥ भैया० ॥ ३ ॥ घटघटव्यापी देखिये रे, कुंथू[3] गजसम रूप । जानै मानै अनुभवै रे, द्यानत सो चिद्रूप ॥ भैया सो० ॥ ४ ॥

१२१ ।

सुन सुन चेतन ! लाड़ले, यह चतुराई कौन हो ॥

---

१ स्थान । २ जलाने । ३ कीटक-कीड़ा ।

टेक ॥ आतम हित तुम परिहस्यो, करत विषय-चिं-
तौन[1] हो ॥ सुन० ॥ १ ॥ गहरी नींव खुदाइकै हो,
मकां[2] किया मजबूत । एक घरी रहि ना सकै हो, जब
आवै जमदूत हो ॥ सुन० ॥ २ ॥ स्वारथ सब जगव-
ल्हौं[3] हो, बिनु स्वारथ नहिं कोय। बच्छा त्यागै गायको
रे, दूध विना जो होय ॥ सुन० ॥ ३ ॥ और फिकर
सब छांड़ि दे हो, दो अक्षर लिख लेह । द्यानत भज
भगवन्तको हो, अर भूखेको देह हो ॥ सुन० ॥ ४ ॥

१२२ ।

हे जिनराजजी, मोहि दुखतैं लेहु छुड़ाइ ॥ टेक ॥
तनदुख, मनदुख, स्वजनदुख, धनदुख कह्यो न जाइ ॥
हे जिन० ॥ १ ॥ इष्टवियोग अनिष्टसमागम, रोग
सोग बहु भाइ ॥ हे जिन० ॥ २ ॥ गरभ जनम मृत
बाल विरध दुख, भोगे धरि धरि काई ॥ हे जिन० ॥३॥
नरक निगोद अनन्ती विरियां, करि करि विषय कषाइ॥
हे जिन० ॥ ४ ॥ पंच परावर्तन बहु कीनें, तुम जानों
जिनराइ ॥ हे जिन० ॥ ५ ॥ भववन भ्रमतम दुख-
दव जम हर, तुम विन कौन सहाइ ॥ हे जिन० ॥६॥
द्यानत हम कछु चाहत नाहीं, भव भव दरस दिखाइ
॥ हे जिन० ॥ ७ ॥

---

१ चिन्तवन । २ मकान-घर । ३ वल्लभ-प्रिय । ४ शरीर ।

१२३

आतमज्ञान लखैं सुख होइ ॥ टेक ॥ पंचेन्द्री सुख मानत भोंदू, यामें सुखको लेश न कोइ ॥ आतम० ॥ १ ॥ जैसे खाज खुजावत मीठी, पीछैं तैं दुखतैं दे रोइ । रुधिरपान करि जोंक सुखी है, सूँतत[1] वहुदुख पावै सोइ ॥ आतम० ॥ २ ॥ फरस दन्ति[2]-रस मीन-गंध अँलि[3], रूप शलर्भ[4] मृग नाद हि लोइ । एक एक इन्द्र नितैं प्राणी, दुखिया भये गये तन खोइ ॥ आतम० ॥ ३ ॥ जैसे कूकर हाड़ चचोरै, त्यों विषयी नर भोगै[5] भोइँ ॥ द्यानत देखो राज त्यागि नृप, वन वसि सहैं परीषह जोइ ॥ आतम० ॥ ४ ॥

१२४

मैं एक शुद्ध ज्ञाता, निरमलसुभावराता ॥ टेक ॥ दृग[6]ज्ञान चरन धारी, थिर चेतना हमारी ॥ मैं० ॥१॥ तिहुँ काल परसों न्यारा, निरद्वंद निरविकारा ॥ मैं० ॥ २ ॥ आनन्दकन्द चन्दा, द्यानत जगत सदंदा ॥ ॥ ३ ॥ अव चिदानन्द प्यारा, हम आपमें निहारा ॥ मैं० ॥ ४ ॥

१२५

सुन ! जैनी लोगो, ज्ञानको पंथ कठिन है ॥ टेक ॥

---

१ पिया हुआ खून खैंचकर वाहिर निकालते समय । २ हाथी । ३ भौंरा । ४ पतंग । ५ भोग । ६ दर्शन ।

सब जग चाहत है विषयनिको, ज्ञानविषै अनबन है ॥ सुनो० ॥ १ ॥ राज काज जग घोर तपत है, जूझ मरैं जहा रन है । सो तो राज हेय करि जानैं, जो कौड़ी गाँठ न है ॥ सुनो० ॥ २ ॥ कुवचन बात तनकसी ताको, सह न सकै जग जन है । सिरपर आन चलावैं आरे, दोष न करना मन है ॥ सुनो० ॥ ३ ॥ ऊपरकी सब थोथी बातैं, भावकी बातैं कम है । द्यानत शुद्ध भाव है जाके, सो त्रिभुवनमें धन है ॥ सुनो० ॥ ४ ॥

१२६ । राग—मलार ।

सुनो जैनी लोगो ! ज्ञानको पंथ सुगम है ॥ टेक ॥ छुक आतमके अनुभव करतैं, दूर होत सब तम है ॥ सुनो० ॥ १ ॥ तनक ध्यान करि कठिन करम गिरि, चचंल मन उपशम है ॥ सुनो० ॥ २ ॥ द्यानत नैसुक राग दोष तज, पास न आवै जम है ॥ सुनो० ॥ ३ ॥

१२७ । राग—धनासरी ।

कर सतसंगति रे भाई ! ॥ टेक ॥ पांन परत नरपतकर सो तो, पाननिसों कर असनाई ॥ कर० ॥ १ ॥ चंदन पास नींम चन्दन है, काठ चढ़यो लोह तर जाई । पारस परस कुधातु कनक है, बूंद उदधि—पदवी पाई ॥ कर० ॥ २ ॥ करई तूंवरि संगतिके फल, मधुर मधुर सुर

१ त्यागने योग्य । २ पत्ता पानोंकी (ताम्बूलकी) मित्रतासे राजाके हाथमें पहुंच जाते हैं । ३ लोहा ।

करि गाई । विष गुन करत संग औषधके, ज्यों वच खाय मिटै वाई[1] ॥ कर० ॥ ३ ॥ दोष घटै प्रगटै गुन मनसा, निरमल ह्वै तजि चपलाई । द्यानत धन्य धन्य जिनके घट, सतसंगति सरधा आई ॥ कर० ॥ ४ ॥

१२८ । राग—धनासरी ।

जैन नाम भज भाई रे! ॥ टेक ॥ जा दिन तेरा कोई नाहीं, ता दिन नाम सहाई रे ॥ जैन० ॥ १ ॥ अगनि नीर ह्वै शत्रु वीरं[2] ह्वै, महिमा होत सवाई । दारिद जावै धन वहु आवै, जा मन नाम दुहाई रे ॥ जैन० ॥ ॥ २ ॥ सोई साध सन्त सोई धन, जिन प्रभुसों लौ लाई । सोई जती सती सो ताकी, उत्तम जात कहाई रे ॥ जैन० ॥ ३ ॥ जीव अनेक तरे सुमरनसों, गिनती गनिय न जाई । सोई नाम जपो नित द्यानत, तजि विकथा दुखदाई रे ॥ जैन० ॥ ४ ॥

१२९ । राग—गौरी ।

चेत रे! प्रानी! चेत रे!, तेरी आव है थोरी ॥ टेक ॥ सागरथिति धरि खिर गये, वँधे कालकी डोरी ॥ चेत० ॥ १ ॥ पाप अनेक उपायकै, माया वहु जोरी । अन्त समय सँग ना चलै, चलै पापकी वौरी[3] ॥ चेत० ॥ २ ॥ मात पिता सुत कामिनी, तू कहत है मोरी । देहकी देह तेरी नहीं जासों, प्रीति है तोरी ॥ चेत० ॥ ३ ॥

१ वायुरोग । २ भाई । ३ पोटरी ।

सिख सुन ले तू कान दे, हो धरमके धोरी। कहै द्यानत यह सार है, सब बातैं कोरी ॥ चेत० ॥ ४ ॥

१३०। राग—गौरी।

रे भाई! सँभाल जगजालमें काल दरहाल रे॥ रे भाई० ॥ टेक ॥ कोड़ जोधाको जीतै छिनमें, एकलो एक हि सूर। कोड़ सूर अस धूर कर डारै, जमकी भौंह करूर ॥ रे भाई० ॥१॥ लोहमें कोट सौ कोट बनाओ, सिंह रखो चहुँओर। इंद फनिंद नरिंद चौकि दैं, नहिं छोड़ै मृतु जोर ॥ रे भाई० ॥ २ ॥ शैल जलै जस आग बलै सो, क्यों छोड़ै तिन सोय॥ देव सबै इक काल भखै है, नरमें क्या बल होय ॥ रे भाई० ॥३॥ देहधारी भये भूपर जे जे, ते खाये सब मौत। द्यानत धर्मको धार चलो शिव, मौतको करके फौत ॥ रे भाई० ॥ ४ ॥

१३१।

पायो जी सुख आतम लखकै॥ पायो० ॥ टेक ॥ ब्रह्मा विष्णु महेश्वरको प्रभु, सो हम देख्यो आप हरखकै ॥ पायो० ॥ १ ॥ देखनि जाननि समझनिवाला, जान्यो आपमें आप परखकै॥ पायो० ॥२॥ द्यानत सब रस विरस लगैं हैं, अनुभौ ज्ञानसुधारस चखकै॥ पायो०॥३॥

१३२। राग—गौरी।

सबसों छिमा छिमा कर जीव! ॥ टेक ॥ मन वच तनसों वैर भाव तज, भज समता जु सदीव ॥ सबसों०

॥ १ ॥ तपतरु उपशम जल चिर सींच्यो, तापस शिव-फल हेत । क्रोध अगनि छनमाहिं जरावै, पावै नरक-निकेत ॥ सबसौं० ॥ २ ॥ सब गुनसहित गहत रिस मनमें, गुन औगुन ह्वै जात । जैसैं प्रानदान भोजन ह्वै, सविष भये तन घात ॥ सबसौं० ॥ ३ ॥ आप समान जान घट घटमें, धर्ममूल यह वीर । द्यानत भवदुख-दाह बुझावै, ज्ञानसरोवरनीर ॥ सबसौं० ॥ ४ ॥

१३३ । राग—आसावरी । ✓

गहु सन्तोष सदा मन रे ! जा सम और नहीं धन रे ॥ गहु० ॥ टेक ॥ आसा कांसा भरा न कबहूं, भर देखा बहुजन रे । धन संख्यात अनन्ती तिसना, यह वानक किमि बन रे ॥ गहु० ॥ १ ॥ जे धन ध्यावैं ते नहिं पावैं, छांड़ैं लगत चरन रे । यह ठगहारी साधुनि डारी, छरद अहारी निधन रे ॥ गहु० ॥ २ ॥ तरुकी छाया नरकी माया, घटै बढ़ै छन छन रे । द्यानत अवि-नाशी धन लागैं, जागैं त्यागैं ते धन रे ॥ गहु० ॥ ३ ॥

१३४ । राग—आसावरी । ✓

रे भाई ! मोह महा दुखदाता ॥ टेक ॥ वसत विरानी अपनी मानैं, विनसत होत असाता ॥ रे भाई० ॥ १ ॥ जास मास जिस दिन छिन विरियाँ, जाको

होसी घाता। ताको राखन सकै न कोई, सुर नर नाग विख्याता ॥ रे भाई० ॥ २ ॥ सब जग मरत जात नित प्रति नहिं, राग विना विललाता। बालक मरैं करै दुख धाय न, रुदन करै बहु माता ॥ रे भाई० ॥३॥ मूंसे हनैं विलाव दुखी नहिं, मुरग हनैं रिसैं खाता (?)। द्यानत मोह-मूल ममताको, नास करै सो ज्ञाता ॥ रे भाई० ॥४॥

१३५। राग–आसावरी।

सोग न कीजे बावरे! मरैं पीतम लोग ॥ सोग० ॥ टेक ॥ जगत जीव जलबुदबुदा, नदि नाव सँजोग ॥ सोग० ॥ १ ॥ आदि अन्तको संग नहिं, यह मिलन वियोग। कई वार सबसों भयो, सनबंध मनोग ॥ सोग० ॥ २ ॥ कोट वरष लौं रोइये, न मिलै वह जोग। देखैं जानैं सब सुनैं, यह तन जमभोग ॥ सोग० ॥ ३ ॥ हरिहर ब्रह्मासे खये, तू किनमें टोग (?)। द्यानत भज भगवन्त जो, विनसै यह रोग ॥ सोग० ॥ ४ ॥

१३६। राग–रामकली।

रे जिया! सील सदा दिढ़ राखि हिये ॥ टेक ॥ जाप जपत तप तपत विविध विधि, सील बिना धिक्कार जिये ॥ रे जि० ॥ १ ॥ सील सहित दिन एक जीवनो, सेव करैं सुर अरघ दिये। कोटि पूर्व थिति सील विहीना, नारकी दें दुख वज्र लिये ॥ रे जि० ॥ २ ॥ ले व्रत भंग

---

१ होगा। २ चूहेके। ३ क्रोध। ४ प्रियजन।

करत जे प्रानी, अभिमानी मदपान पिये । आपद पावैं विघन बढ़ावैं, उर नाहिं कछु लेखा[1]न किये ॥ रे जि० ॥ ३ ॥ सील समान न को[2] हित जगमें, अहित न मैथुन सम गिनिये । द्यानत रतन जतनसों गहिये, भवदुख दारिद-गन दहिये ॥ रे जि० ॥ ४ ॥

१३७ । राग—आसावरी ।

श्रीजिनधर्म सदा जयवन्त ॥ श्री० ॥ टेक ॥ तीन लोक तिहुँ कालनिमाहीं, जाको नाहीं आदि न अन्त ॥ श्री० ॥ १ ॥ सुगुन छियालिस दोप निवारैं, तारन तरन देव अरहंत । गुरु निरग्रंथ धरम करुनाँ[3]मय, उपजैं त्रेसठ पुरुप महंत ॥ श्री० ॥ २ ॥ रतनत्रय दशलच्छन सोलह,-कारन साध सरा[4]वक सन्त । छहौं दरव नव तत्त्व सरधकै, सुरग मुकतिके सुख विलसन्त ॥ श्री० ॥ ३ ॥ नरक निगोद भम्यो वहु प्रानी, जान्यो नाहिं धरम-विरतंत । द्यानत भेदज्ञान सरधातैं, पायो दरव अनादि अनन्त ॥ श्री० ॥ ४ ॥

१३८ ।

जव वानी खिरी महावीरकी तव, आनँद भयो अ-पार ॥ जव० ॥ टेक ॥ सव प्रानी मन ऊपजी हो, धिक धिक यह संसार ॥ जव० ॥ १ ॥ वहुतनि सम-कित आदस्यो हो, श्रावक भये अनेक । घर तजकैं वहु

---

१ हिसाव । २ कोई दूसरा । ३ दयामयी । ४ श्रावक ।

वन गये हो, हिरदै धर्यो विवेक ॥ जब० ॥ २ ॥ केई भावैं भावना हो, केई गहैं तप घोर। केई जपैं प्रभु नामको ज्यों, भाजैं कर्म कठोर ॥ जब० ॥ ३ ॥ बहुतक तप करि शिव गये हो, बहुत गये सुरलोक। द्यानत सो बानी सदा ही, जयवन्ती जग होय ॥ जब० ॥ ४ ॥

१३९। राग—ख्याल।

वे कोई निपट अनारी, देख्या आतमराम ॥ वे० ॥ टेक ॥ जिनसों मिलना फेरि बिछुरना, तिनसों कैसी यारी। जिन कामोंमें दुख पावै है, तिनसों प्रीति करारी ॥ वे० ॥ १ ॥ बाहिर चतुर मूढ़ता घरमें, लाज सबै परिहारी। ठगसों नेह वैर साधुनिसों[1], ये बातैं विसतारी ॥ वे० ॥ २ ॥ सिंह डाढ़ भीतर सुख मानै, अकल सबै विसारी। जा तरु आग लगी चारौं दिश, बैठि रह्यो तिहँ डारी[2] ॥ वे० ॥ ३ ॥ हाड़ मांस लोहूकी थैली, तामें चेतनधारी। द्यानत तीनलोकको ठाकुर, क्यों हो रह्यो भिखारी ॥ वे० ॥ ४ ॥

१४०। राग—बिलावल।

आतम काज सँवारिये, तजि विषय किलोलैं ॥ आतम० ॥ टेक ॥ तुम तो चतुर सुजान हो, क्यों करत अलोलैं ॥ आतम० ॥ १ ॥ सुख दुख आपद सम्पदा, ये

---

१ साधु (सज्जन) पुरुषोंसे. २ डाली, शाखा.

कर्म झकोलैं[1] । तुम तो रूप अनूप हो, चैतन्य अमोलैं ॥ आतम० ॥ २ ॥ तन धनादि अपने कहो, यह नहिं तुम तोलैं[2] । तुम राजा तिहुँ लोकके; ये जात निठोलैं[3] ॥ आतम० ॥ ३ ॥ चेत चेत द्यानत अवै, इमि सद्गुरु वोलैं । आतम निज पर पर लखौ, अरु वात ढँकोलैं[4] ॥ आतम० ॥ ४ ॥

१४१ ।

वीतराग नाम सुमर, वीतराग नाम ॥ टेक ॥ भजन विना किये यार, होगा वदनाम ॥ वीतराग० ॥ १ ॥ जाको करै धूमधाम, सो तो धूमैंधाम । पातँशाह[5] होय चुके, सँरयो[6] कौन काम ॥ वीतराग० ॥ २ ॥ वातैं पर-वीन करै, काम करै खाम । काल सिंह आवत है, पकर एक ठाम ॥ वीतराग० ॥ ३ ॥ आठ जाम लागि रह्यौ, चाम निरख दाम । द्यानत कवहूँ न भूल, साहिव अ-भिराम ॥ वीतराग० ॥ ४ ॥

१४२ । राग—आसावरी ।

आज आनन्द वधावा ॥ आज० ॥ टेक ॥ जनम्यो आदीसुर, नाभीके भौन । कीनौं सव इन्द्र मिलि, मेरुपै न्हौंन ॥ आज० ॥ १ ॥ ऐरावत शक्रँ[7] चढ्यो, गोदमें किशो-र । नाचत हैं अपछरा सु सत्ताइस कोर्र[8] ॥ आज० ॥ २ ॥

---

१ झकोरैं । २ समान । ३ वाहियात । ४ वादलोंके समान अ-स्थिर । ५ वादशाह । ६ सिद्ध हुआ । ७ इन्द्र । ८ करोड़ ।

अजोध्या नगर सब, घेस्यो देवि देव । नर नारी अचरज यहं, देखैं सब एव ॥ आज० ॥३॥ द्यानत मरुदेवीपद, सची सीस नाय । धन धन जग माता, हमैं सुख दाय ॥ आज० ॥ ४ ॥

१४३ । राग—होरी ।

मिथ्या यह संसार है, झूठा यह संसार है रे ॥ मिथ्या० ॥ टेक ॥ जो देही षट्रससों पोपै, सो नहिं संग चलै रे । औरनिको तोहि कौन भरोसो, नाहक मोह करै रे, भाइ ॥ मिथ्या० ॥१ ॥ सुखकी वातैं बूझै नाहीं, दुखको सुक्ख लखै रे । मूढ़ोंमाहीं मातौ डोलै, साधौं पास डरै रे, भाई ॥ मिथ्या० ॥ २ ॥ झूठ कमाता झूठी खाता, झूठी जाप जपै रे । सच्चा साईं सूझै नांहीं, क्यों करि पार लगैरे, भाई ॥ मिथ्या० ॥ ३ ॥ जमसों डरता फूला फिरता, करता मैं मैं मैं रे । द्यानत स्याना सोही जाना, जो प्रभु ध्यान धरै रे, भाई ॥ मिथ्या० ॥ ४ ॥

१४४ । राग—[illegible] ।

रे भाई ! करुना जन रे ॥ रे भाई० ॥ टेक ॥ सब जिय आप समान हैं रे, घाटे वाधे नाहिं कोय । जाकी हिंसा तू करै रे !, तेरे हिंसा होय ॥ रे भाई० ॥ १ ॥ छह दरसनवाले कहैं रे !, जीवदया सरदार । पालै

---

१ उन्मत्त होकर । हीन । ३ अधिक ।

कोई एक है रे !, कथनी कथै हजार ॥ रे भाई० ॥ २ ॥ आधे दोहेमें कह्या रे !, कोट ग्रंथको सार । परपीड़ा सो पाप है रे !, पुन्य सु परउपगार ॥ रे भाई० ॥ ३ ॥ सो तू परको मति कहै रे !, बुरी जु लागै तोय । लाख बातकी बात है रे ! द्यानत ज्यों सुख होय ॥ रे भाई० ॥ ४ ॥

१४५ । राग—ख्याल ।

कहुं दीठा[1] नेमिकुमार ॥ टेक ॥ व्याहन आया बहु दल लायां, रथ ऊपर असवार । इन्द्र सरीखे चाकर जाके, शोभा वार न पार ॥ कहुं० ॥ १ ॥ नारायन अति कूर कमाया, घेरे जीव अपार । शोर जु कीने करुना भीने, दीने बंध निवार ॥ कहुं० ॥ २ ॥ पट भूपन बहु भार डारके, पंच महाव्रत धार । गये कहां कछु सुधि है पाई, मोह कहो इह वार ॥ कहुं० ॥ ३ ॥ जो सुध लावै मोह मिलावै, सोई पीतम सार । द्यानत कहै करोंगी सोई, देखौं नैन निहार ॥ कहुं० ॥ ४ ॥

१४६ । राग—सो० ।

राम भरतसों कहैं सुभाइ, राज भोगवो थिर मन लाइ ॥ राम० ॥ टेक ॥ सीता लीनी रावन घात, हम आये देखनको भ्रात ॥ राम० ॥ १ ॥ माताको कछु दुख मति देहु, घरमें धरम करो धरि नेह ॥ राम० ॥२॥

1 देखा ।

द्यानत दीच्छा लैंगे साथ, तात वचन पालो नरनाथ॥ राम०॥ ३॥

१४७। राग—गौरी।

कहैं भरतजी सुन हो राम! राज भोगसों मोहि न काम॥ टेक॥ तब मैं पिता साथ मन किया, तात मात तुम करन न दिया॥ कहैं०॥ १॥ अब लौं बरस वृथा सब गये, मनके चिन्ते काज न भये॥ कहैं०॥२॥ चिन्तै थे कब दीक्षा बनै, धनि तुम आये करने मनै॥ कहैं०॥ ३॥ आप कहा था सब मैं करा, पिता कर-कौं अब मन धरा॥ कहैं०॥ ४॥ यों कहि दृढ़ वैरा-ग्य प्रधान, उठ्यो भरत ज्यों भरत सुजान॥ कहैं०॥ ॥ ५॥ दीक्षा लई सहस नृप साथ, करी पहुंपवरषा सुरनाथ॥ कहैं०॥ ६॥ तप कर मुकत भयो वर वीर, द्यानत सेवक सुखकर धीर॥ कहैं०॥ ७॥

१४८। राग—मल्हार। ✓

हम तो कबहुँ न निज घर आये॥ टेक॥ पर घर फिरत बहुत दिन बीते, नाम अनेक धराये॥ हम तो०॥ १॥ परपद निजपद मानि मगन ह्वै, पर परनति लपटाये। शुद्ध बुद्ध सुखकंद मनोहर, आतम गुण नहिं गाये॥ हम तो०॥ २॥ नर पशु देव नरक निज मान्यो, परजयबुद्ध कहाये। अमल अखंड अतुल

१ पुष्पवृष्टि फूलोंकी वर्षा।

अविनाशी, चेतन भाव न भाये ॥ हम तो० ॥ ३ ॥ हित अनहित कछु समझ्यो नाहीं, मृगजललुर्ब ज्यों धाये । द्यानत अब निज-निज, पर-पर है, सद्गुरु वैन सुनाये ॥ हम तो० ॥ ४ ॥

१४९ । राग–दुलरीकी ढाल ।

श्रीजिनदेव ! न छांड़ि हों, सेवा मन वच काय हो ॥ श्री० ॥ टेक ॥ सब देवनिके देव हो, सब गुरुके गुरुराय हो ॥ श्री० ॥ १ ॥ गरभ जनम तप ज्ञान शिव, पंचकल्यानक-ईश हो । पूजैं त्रिभुवनपति सदा, तुमको श्रीजगदीश हो ॥ श्री० ॥ २ ॥ दोष अठारह छय गये, गुणहि छियालिस खान हो । महा दुखीको देत हो, बड़े रतनको दान हो ॥ श्री० ॥ ३ ॥ नाम थापना दरबको, भाव खेत² अरु काल हो । षट विधि मंगल जे करैं, दुख नासै सुखमाल हो ॥ श्री० ॥ ४ ॥ एक दरब कर जो भजै, सो पावै सुख सार हो । आठ दरब ले हम जजैं, क्यों नहिं उतरैं पार हो ॥ श्री० ॥ ५ ॥ गुन अनन्त भगवन्तजी, कहि न सकैं सुरराय हो । बुद्धि तनँकसी³ मोविषैं, तुम ही होहु सहाय हो ॥ श्री० ॥ ६ ॥ तातैं वन्दों जगगुरु ! वन्दों दीनदयाल हो । वन्दों स्वामी लोकके, वन्दों भविजनपाल हो ॥ ॥ श्री० ॥ ७ ॥ विनती कीनीं भावसों, रोम रोम

---

१ जैसे मृगजल समझकर (दौडता है) । २ क्षेत्र । ३ थोड़ीसी ।

हरपाय हो । इस संसार असारमें, द्यानत भक्ति उपाय हो ॥ श्री० ॥ ८ ॥

१५० । राग—बिलावल ।

मानुषभव पानी दियो, जिन राम न जाना ॥ मानुष० ॥ टेक ॥ पाप अनेक उपायकै, गयो नरक निदाना ॥ मानुष० ॥ १ ॥ पुन्य उदय सम्पत मिली, फूल्या न समाना । पाप उदय जब खिर गई, हा ! हा ! बिललाना ॥ मानुष० ॥ २ ॥ तीरथ बहुतेरे फिरे, अरचे पाखांना । राम कहूँ नहिं पाइयो, हूए हैराना ॥ मानुष० ॥ ३ ॥ राम मिलनके कारनैं, दीए बहु दाना । आठ पहर शुक ज्यों रटे, नहिं रूप पिछाना ॥ मानुष० ॥ ४ ॥ तलैं कहै ऊपर कहै, पावै न ठिकाना । देखैं जानै कौन है, यह ज्ञान न आना ॥ मानुष० ॥ ५ ॥ वेद पढ़ैं केई तप तपैं, कोई जाप जपाना । रैन दिना खोटी घड़ैं, चाहैं कल्याना ॥ मानुष० ॥ ६ ॥ राम सबै घट घट बसैं, कहिं दूर न जाना । ज्यों चकमकमें आग है, त्यों तन भगवाना ॥ मानुष० ॥ ७ ॥ तिनका ओट पहार है, जानै न अयाना । द्यानत निपट नजीक है, लख चेतनवाना ॥ मानुष० ॥ ८ ॥

१५१ । राग—आसावरी ।

अब मैं जान्यो आतमराम ॥ अब० ॥ टेक ॥ काम

---

१ पत्थर-प्रतिमा ।

न आवै गोधन धाम ॥ अव० ॥ १ ॥ जिहँ जान्या विन दुख वहु सह्यो, सो गुरुसंगति सहजैं लह्यो ॥ अव० ॥ २ ॥ किये अज्ञानमाहिं जे कर्म, सव नाशे प्रगट्यो निज धर्म ॥ अव० ॥ ३ ॥ जास न रूप गंध रस फास, देख्यो करि अनुभौ अभ्यास ॥ अव० ॥ ४ ॥ जो परमातम सो ममरूप, जो मम सो परमातम भूप ॥ अव० ॥ ५ ॥ सर्व जीव हैं मोहि समान, मेरे वैर नहीं तिन-मान ॥ अव० ॥ ६ ॥ जाको ढूंढ़ै तीनौं लोक, सो मम घटमें है गुण थोक ॥ अव० ॥ ७ ॥ जो करना था सो कर लिया, द्यानत निज गह पर तज दिया ॥ अव० ॥ ८ ॥

१५२ । राग—धमाल ।

चेतन प्राणी चेतिये हो, अहो भवि प्रानी चेतिये हो, छिन छिन छीजत आव ॥ टेक ॥ घड़ी घड़ी घड़ियाल रटत है, कर निज हित अव दाव ॥ चेतन० ॥ टेक ॥ १ ॥ जो छिन विषय भोगमें खोवत, सो छिन भजि जिन नाम । यातैं नरकादिक दुख पैहै, यातैं सुख अभिराम ॥ चेतन० ॥ २ ॥ विषय भुजंगमके डसे हो, रुले वहुत संसार । जिन्हैं विषय व्यापै नहीं हो, तिनको जीवन सार ॥ चेतन० ॥ ३ ॥ चार गतिनिमें दुर्लभ नर भव, नर विन मुकति न होय । सो तैं पायो भाग उदय हो, विषयनि—सँग मति खोय ॥ चेतन०

॥ ४ ॥ तन धन लाज कुटुँवके कारन, मूढ़ करत है पाप। इन ठगियोंसे ठगायकै हो, पावै बहु दुख आप ॥ चेतन० ॥ ५ ॥ जिनको तू अपने कहै हो, सो तो तेरे नाहिं। कै तो तू इनकौं तजै हो, कै ये तुझे तज जाहिं ॥ चेतन० ॥ ६ ॥ पलक एककी सुध नहीं हो, सिरपर गाजै काल। तू निचिन्त क्यों बावरे हो, छांड़ि दे सब भ्रमजाल ॥ चेतन० ॥ ७ ॥ भजि भगवन्त महन्तको हो, जीवन-प्राणअधार। जो सुख चाहै आपको हो, द्यानत कहै पुकार ॥ चेतन० ॥ ८ ॥

१५३। राग—विलावल।

भजि मन प्रभु श्रीनेमिको, तजी राजुल नारी ॥ टेक ॥ जाके दरसन देखतैं, भाजै दुख भारी ॥ भजि० ॥ १ ॥ ज्ञान भयो जिनदेवको, इन्द्र अवधि विचारी। धनपतिने समोसरनकी, कीनी विधि सारी ॥ भजि० ॥ ॥ २ ॥ तीन कोट चहुं थंभश्री, देखैं दुखहारी। द्वादश कोठे बीचमें, वेदी विस्तारी ॥ भजि० ॥३॥ तामैं सोहैं नेमिजी, छ्यालिस गुणधारी। जाकी पूजा इन्द्रने, करी अष्टप्रकारी ॥ भजि० ॥ ४ ॥ सकल देव नर जिहिं भजैं, बानी उच्चारी। जाको जस जम्पंत[1] मिलै, सम्पत अविकारी ॥ भजि० ॥ ५ ॥ जाकी बानी सुनि भये, केवल दुतिकारी। गनधर मुनि श्रावक सुधी, ममताबुधि डारी

---

१ गानेसे।

॥ भजि० ॥ ६ ॥ राग दोष मद मोह भय, जिन तिन्हा टारी । लोक अलोक त्रिकालकी, परजाय निहारी ॥ भजि० ॥ ७ ॥ ताको मन वच कायसों, वन्दना हमारी । द्यानत ऐसे स्वामिकी, जइये वलिहारी ॥ भजि० ॥ ८ ॥

१५४ ।

प्राणी लाल ! छांड़ो मन चपलाई ॥ प्राणी० ॥ टेक ॥ देखो तन्दुलमच्छ[1] जु मनतैं, लहै नरक दुखदाई ॥ ॥ प्राणी० ॥ १ ॥ धारै मौन दया जिनपूजा, काया वहुत तपाई । मनको शल्य गयो नाहिं जव लों, करनी सकल गंवाई ॥ प्राणी० ॥ २ ॥ वाहूवल मुनि ज्ञान न उपज्यो, मनकी खुटक[2] न जाई । सुनतैं मान तज्यो मनको तव, केवलजोति जगाई ॥ प्राणी० ॥ ३ ॥ प्रसनचंद रिषि नरक जु जांते, मन फेरत शिव पाई । तनतैं वचन वचनतैं मनको, पाप कह्यो अधिकाई ॥ प्राणी० ॥ ४ ॥ देंहिं दान गहि शील फिरैं वन, परनिन्दा न सुहाई । वेद पढ़ैं निरग्रंथ रहैं जिय, ध्यान विना न वड़ाई ॥ प्राणी० ॥ ५ ॥ त्याग फरस रस गंध वरण सुर, मन इनसों लौ लाई । घर ही कोस पचास भ्रमत ज्यों, तेलीको वृषँ[3] भाई ॥ प्राणी० ॥ ६ ॥ मन कारण है सव कारजको, विकलप वंध वढ़ाई । निरविकलप मन मोक्ष करत है, सूधी वात वताई ॥ प्राणी० ॥ ७ ॥ द्यानत

१ महामच्छके कर्णमे रहनेवाला मच्छ । २ शल्य खटक । ३ वैल ।

जे निज मन वश करि हैं, तिनको शिवसुख थाई। बार बार कहुं चेत संवेरो, फिर पाछैं पछताई ॥ प्राणी० ॥८॥

१५५। राग—काफी।

भाई! ज्ञान विना दुख पाया रे ॥ भाई० ॥ टेक ॥ भव दश आठ उस्वास स्वासमें, साधारन लपटाया रे ॥ भाई० ॥ १ ॥ काल अनन्त यहां तोहि बीते, जब भई मंद कषाया रे। तब तू तिस निगोद सिंधूतैं, थावर होय निसारा रे ॥ भाई० ॥ २ ॥ क्रम क्रम निकस भयो विकलत्रय, सो दुख जात न गाया रे। भूख प्यास परवश सहि पशुगति, बार अनेक बिकाया रे ॥ भाई० ॥ ३ ॥ नरकमाहिं छेदन भेदन बहु, पुतरी अगन जलाया रे। सीत तपत दुरगंध रोग दुख, जानैं श्रीजिनराया रे ॥ भाई० ॥ ४ ॥ भ्रमत भ्रमत संसार महावन, कबहूँ देव कहाया रे। लखि परविभौ सह्यौ दुख भारी, मरन समय विललाया रे ॥ भाई० ॥ ५ ॥ पाप नरक पशु पुन्य सुरग बसि, काल अनन्त गमाया रे। पाप पुन्य जब भये बराबर, तब कहुँ नरभव पाया रे ॥ ॥ भाई० ॥ ६ ॥ नीच भयो फिर गरभ खयो फिर, जनमत काल सताया रे। तरुणपनै तू धरम न चेतै, तन-धन-सुत लौ लाया रे ॥ भाई० ॥ ७ ॥ दरवलिंग

---

१ जल्दी। २ निकला।

धरि धरि बहु मरि तू, फिरि फिरि जग भमि आया रे। द्यानत सरधाजुत गहि मुनिव्रत, अमर होय तजि काया रे ॥ भाई० ॥ ८ ॥

१५६ । राग—काफी ।

भाई! कहा देख गरवाना रे ॥ भाई० ॥ टेक ॥ गहि अनन्त भव तैं दुख पायो, सो नहिं जात बखाना रे ॥ भाई० ॥ १ ॥ माता रुधिर पिताके वीरज, तातैं तू उपजाना रे । गरभ वास नवमास सहे दुख, तल सिर पांव उचाना रे ॥ भाई० ॥ २ ॥ मात अहार चिगल मुख निगल्यो, सो तू असन गहाना रे। जंती तार सुनार निकालै, सो दुख जनम सहाना रे ॥ भाई० ॥ ३ ॥ आठ पहर तन मलि मलि धोयो, पोष्यो रैन विहाना रे। सो शरीर तेरे संग चल्यो नाहिं, खिनमें खाक समाना रे ॥ भाई० ॥ ४ ॥ जनमत नारी, वाढ़त भोजन, समरथ दरव नसाना रे । सो सुत तू अपनो कर जानै, अन्त जलावै प्राना रे ॥ भाई० ॥ ५ ॥ देखत चित्त मिलाप हरै धन, मैथुन प्राण पलाना रे । सो नारी तेरी है कैसे, मूवें प्रेत प्रमाना रे ॥ भाई० ॥ ६ ॥ पांच चोर तेरे अन्दर पैठे, तैं ठाना मित्राना रे । खाय पीय धन ज्ञान लूटके, दोष तेरे सिर ठाना रे ॥ भाई० ॥७॥ देव धरम गुरु रतन अमोलक, कर अन्तर सरधाना रे।

द्यानत ब्रह्मज्ञान अनुभव करि, जो चाहै कल्याना रे।
॥ भाई० ॥ ८ ॥

१५७। राग—काफी।

कर मन! निज-आतम-चिंतौन ॥ कर० ॥ टेक ॥
जिहि विनु जीव भम्यो जग-जौन ॥ कर० ॥ १ ॥
आतममगन परम जं साधि, ते ही त्यागत करम उपा-
धि ॥ कर० ॥ २ ॥ गहि व्रत शील करत तन शोख.
ज्ञान विना नहिं पावत मोख ॥ कर० ॥ ३ ॥ जिहि-
तैं पद अरहन्त नरेश, राम काम हरि इंद फणेश ॥
कर० ॥ ४ ॥ मनवांछित फल जिहितैं होय, जिहिकी
पटतर अवर न कोय ॥ कर०॥५॥ तिहूँ लोक तिहुँकाल-
मँझार, वरन्यो आतमअनुभव सार ॥ कर० ॥ ६ ॥
देव धरम गुरु अनुभव ज्ञान, मुकति नींव पहिली सो-
पान[1] ॥ कर० ॥ ७ ॥ सो जानैं छिन व्है शिवराय,
द्यानत सो गहि मन वच काय ॥ कर० ॥ ८ ॥

१५८। राग—काफी।

भाई! जानो पुद्गल न्यारा रे ॥ भाई० ॥ टेक ॥
क्षीर नीर जड़ चेतन जानो, धातु पखान विचारा रे
॥ भाई० ॥१॥ जीव करमको एक जाननो, भाख्यो
श्रीगणधारा[2] रे। इस संसार दुःखसागरमें, तोहि भ्र-
मावनहारा रे ॥ भाई० ॥ २ ॥ ग्यारह अंग पढ़ सब

१ पैडी। २ गणधरने।

पूरव, भेद-ज्ञान न चितारा रे । कहा भयो सुवटाकी नाईं, रामरूप न निहारा रे ॥ भाई० ॥ ३ ॥ भवि उपदेश मुकत पहुँचाये, आप रहे संसारा रे । ज्यों मलाह पर पार उतारै, आप वारका वारा रे ॥ भाई० ॥४॥ जिनके वचन ज्ञान परगासैं, हिरदै मोह अपारा रे। ज्यों मशालची और दिखावै, आप जात अँधियारा रे ॥ भाई० ॥ ५ ॥ वात सुनैं पातक मन नासै, अपना मैल न झारा रे। वांदी परपद मलि मलि धोवै, अपनी सुधि न सँभारा रे ॥ भाई० ॥ ६ ॥ ताको कहा इलाज कीजिये, वूड़ा अम्बुधि धारा रे। जाप जप्यो वहु ताप तप्यो पर, कारज एक न सारा रे ॥ भाई० ॥ ७ ॥ तेरे घटअन्तर चिनमूरति, चेतनपदउजियारा रे । ताहि लखै तासौं वनि आवै, द्यानत लहि भव पारा रे ॥ भाई० ॥ ८ ॥

१५९ । राग-सोरठ ।

भजो आतमदेव, रे जिय ! भजो आतमदेव ॥ रे जिय० ॥ टेक ॥ लहो शिवपद एव ॥ रे जिय० ॥ ॥ १ ॥ असंख्यात प्रदेश जाके, ज्ञान दरस अनन्त । सुख अनन्त अनन्त वीरज, शुद्ध सिद्ध महन्त ॥ रे जिय० ॥ २ ॥ अमल अचलातुल अनाकुल, अमन अवच अदेह । अजर अमर अखय अभय प्रभु, रहित-

१ तोतेके समान । २ मल्लाह । ३ दासी ।

विकलप नेह॥ रे जिय० ॥३॥ क्रोध मद व्रल लोभ न्यारो, बंध मोख विहीन । राग दोप विमोह नाहीं, चेतना गुणलीन ॥ रे जिय० ॥ ४ ॥ फरस रस सुर गंध सपरस, नाहिं जामें होय । लिंग मारगना नहीं, गुणथान नाहीं कोय ॥ रे जिय० ॥ ५ ॥ ज्ञान दर्शन चरनरूपी, भेद सो व्योहार । करम करना क्रिया निहचै, सो अभेद विचार॥ रे जिय०॥६॥ आप जाने आप करके, आपमाहीं आप । यही व्योरा मिट गया तब, कहा पुन्यरु पाप॥ रे जिय० ॥ ७ ॥ है कहै है नहीं नाहीं, स्यादवाद प्रमान । शुद्ध अनुभव समय द्यानत, करौ अम्रतपान॥ रे जिय० ॥८॥

१६० । राग—आसावरी ।

भाई ब्रह्मज्ञान नाहिं जाना रे ॥ भाई० ॥ टेक ॥ सब संसार दुःख सागरमें, जामन मरन कराना रे ॥ भाई० ॥ १ ॥ तीन लोकके सब पुदगल तैं, निगल निगल उगलाना रे । छंर्दि[1] डारके फिर तू चाखै, उपजै तोहि न ग्लाना रे ॥ भाई० ॥ २ ॥ आठ प्रदेश विना तिहुँ जगमें, रहा न कोइ ठिकाना रे । उपजा मरा जहां तू नाहीं, सो जानै भगवाना रे ॥ भाई० ॥ ३ ॥ भव भवके नख केस नालका, कीजे जो इक ठाना रे । होंय अधिक ते गिरि सुमेरुतैं, भाखा वेद पुराना रे ॥ भाई० ॥ ४ ॥ जननी थन[2]-पय जनम जनमको, जो तैं कीना पाना रे । सो तो

---

१ कै वमन । २ स्तनका दूध ।

अधिक सकल सागरतैं, अजहूं नाहिं अघाना रे ॥ भाई० ॥ ५ ॥ तोहि मरण जे माता रोईं, आसूँ जल सगलाना रे। अधिक होय सब सागरसेती, अजहूँ त्रास न आना रे ॥ भाई० ॥ ६ ॥ गरभ जनम दुख बाल विरध दुख, वार अनन्त सहाना रे। दरवलिंग धरि जे तन त्यागे, तिनको नाहिं प्रमाना रे ॥ भाई० ॥ ७ ॥ बिन समभाव सहे दुख एते, अजहूँ चेत अयाना रे । ज्ञान-सुधारस पी लहि द्यानत, अजर अमरपद थाना रे ॥ भाई० ॥ ८ ॥

१६१ । राग—धमाल ।

साधो ! छांड़ो विषय विकारी । जातैं तोहि महा दुखकारी ॥ साधो० ॥ टेक ॥ जो जैनधर्मको ध्यावै, सो आतमीक सुख पावै ॥ साधो० ॥ १ ॥ गज फरस-विषैं दुख पाया, रस मीन गंध अलि[1] गाया । लखि दीप शलभ[2] हित कीना, मृग नाद सुनत जिय दीना ॥ साधो० ॥ २ ॥ ये एक एक दुखदाई, तू पंच रमत है भाई । यह कौनें, सीख बताई, तुमरे मन कैसैं आई ॥ साधो० ॥ ३ ॥ इनमाहिं लोभ अधिकाई, यह लोभ कुगतिको भाई । सो कुगतिमाहिं दुख भारी, तू त्याग विषय मतिधारी ॥ साधो० ॥ ४ ॥ ये सेवत सुखसे लागैं, फिर अन्त प्राणको त्यागैं । तातैं ये विषफल

---

१ भ्रमर । २ पतग ।

कहिये, तिनको कैसे कर गहिये ॥ साधो० ॥ ५ ॥ तव-लौं विषया रस भावै, जवलौं अनुभव नहिं आवै । जिन अमृत पान ना कीना, तिन और रसन चित दीना ॥ साधो० ॥ ६ ॥ अव वहुत कहां लौं कहिए, कारज क-हि चुप ह्वै रहिये । ये लाख वातकी एक, मत गहो वि-षयकी टेक ॥ साधो० ॥ ७ ॥ जो तजै विषयकी आसा, द्यानत पावै शिववासा । यह सतगुरु सीख वताई, काहू विरले जिय आई ॥ साधो० ॥ ८ ॥

१६२ । राग—आसावरी ।

हमको कैसैं शिवसुख होई ॥ हमको० ॥ टेक ॥ जे जे मुकत जानके कारण, तिनमेंको नहि कोई ॥ हम-को० ॥ १ ॥ मुनिवरको हम दान न दीना, नाहिं पूज्यो जिनराई । पंच परम पद वन्दे नाहीं, तपविधि वन नहिं आई ॥ हमको० ॥ २ ॥ आरत रुद्र कुध्यान न त्यागे, धरम शुकल नहिं ध्याई । आसन मार करी आसा दिढ़, ऐसे काम कमाई ॥ हमको० ॥ ३ ॥ विषय कषाय वि-नाश न हूआ, मनको पंगु न कीना । मन वच काय जोग थिर करकैं, आतमतत्त्व न चीना ॥ हमको० ॥ ४ ॥ मुनि श्रावकको धरम न धास्यो, समता मन नहिं आनी । शुभ करनी करि फल अभिलाष्यो, ममता-वुध अधिकानी ॥ हमको० ॥ ५ ॥ रामा रामा धन धन कारन, पाप अनेक उपायो । तव हू तिसना भई न पूरन,

जिनवानी यों गायो ॥ हमको० ॥ ६ ॥ राग दोष परनाम न जीते, करुना मन नहिं आई। झूठ अदत्त कुशील गह्यो दिढ़, परिग्रहसों लौ लाई ॥ हमको० ॥ ७ ॥ सातौं विसन गहे मद धास्यो, सुपरभेद नहिं पाई। द्यानत जिनमारग जाने विन, काल अनन्त गमाई ॥ हमको० ॥ ८ ॥

१६३।

भज रे भज रे मन! आदिजिनंद, दूर करैं तेरे अघवृंद[1] ॥ भज० ॥ टेक ॥ नाभिराय मरुदेवी नंद, सकल लोकमें पूनमचन्द ॥ भज० ॥ १ ॥ जाको ध्यावत त्रिभुवनइंद, मिथ्यातमनाशन जु दिनंद[2] ॥ भज० ॥ २ ॥ शुद्ध बुद्ध प्रभु आनँदकंद, पायो सुख नास्यो दुखदंद ॥ भज० ॥ ३ ॥ जाको ध्यान धरैं जु मुनिन्द, तेई पावत परम अनंद ॥ भज० ॥ ४ ॥ जिनको मन-वच-तन-करि वंद, द्यानत लहिये शिवसुखकंद ॥ भज० ॥ ५ ॥

१६४।

सुन चेतन इक वात हमारी, तीन भुवनके राजा। रंक भये विललात फिरत हो, विषयनि सुखके काजा ॥१॥ चेतन तुम तो चतुर सयाने, कहां गई चतुराई। रंचक विषयनिके सुखकारण, अविचल ऋद्धि गमाई ॥ २ ॥ विषयनि सेवत सुख नहिं राई, दुख है मेरु

---

१ पापसमूह। २ सूरज।

समाना। कौन सयानप कीनी भौंदू, विषयनिसों लपटाना ॥ ३ ॥ इस जगमें थिर रहना नाहीं, तैं रहना क्यों माना। सूझत नाहिं कि भांग खाइ है, दीसै परगट जाना ॥ ४ ॥ तुमको काल अनन्त गये हैं, दुख सहते जगमाहीं। विषय कषाय महारिपु तेरे, अजहूं चेतन नाहीं ॥ ५ ॥ ख्याति लाभ पूजाके काजैं, बाहिज भेष बनाया। परमतत्त्वको भेद न जाना, वादि अनादि गँवाया ॥ ६ ॥ अति दुर्लभ तैं नर भव लहकैं, कारज कौन समारा। रामा रामा धन धन सॉटैं, धर्म अमोलक हारा ॥ ७ ॥ घट घट साईं मैंनू दीसै, मूरख मरम न पावै। अपनी नाभिसुवास[३] लखे विन, ज्यों मृग चहुँ दिशि धावै ॥ ८ ॥ घट घटसाईं घटसा नाईं, घटसों घटमें न्यारो। घूंघटका पट खोल निहारो, जो निजरूप निहारो ॥ ९ ॥ ये दश माझ (?) सुनैं जो गावै, निरमल मनसा करके। द्यानत सो शिवसम्पति पावै, भवदधि पार उतरके ॥ १० ॥

१६५। राग—सोरठ।

जिनराय! मोह भरोसो भारी ॥ जैन० ॥ टेक ॥ सुर नरनाथ विभूति देहु तौ, अब नहिं लागत प्यारी ॥ जिनराय० ॥ १ ॥ सिरीपाल भूपाल विथा गई, लहि सम्पत अधिकारी। सूली सेठ अगनितैं सीता, कहा

१ सयानपन। २ वदलेमें। ३ कस्तूरीकी सुगंधि।

भयो जो उवारी॥ जिनराय० ॥२॥ विदित रूप पुर(?) तसकर तुमतैं, भये अमर अवतारी । भवसुदत्त अरु सालभद्रकी, किहि कारण रिधि सारी ॥ जिनराय० ॥३॥ भेक[1] स्वान गज सिंह भये सुर, विषय रीति विस्तारी । कृश्न पिता सुत(?)वहु रिधि पाई, विनाशीक हम धारी ॥ जिनराय० ॥ ४ ॥ जातिविरोध जात जीवनिके, मूरति देखि तिहारी । मानतुङ्गके वन्धन टूटे, यह शोभा तुम न्यारी ॥ जिनराय० ॥ ५ ॥ तारन तरन सुविरद तिहारो, यह लखि चिन्ता डारी। द्यानत शिवपद आप हि देहो, वनी सु वात हमारी ॥ जिनराय० ॥ ६ ॥

१६६।

प्रानी ! ये संसार असार है, गर्व न कर मनमाहिं ॥ प्रानी० ॥ टेक ॥ जे जे उपजैं भूमिपै, जमसों छूटैं नाहिं ॥ प्रानी० ॥ १ ॥ इन्द्र महा जोधा वली, जीत्यो रावनराय । रावन लछमनने हत्यो, जम गयो लछमन खाय ॥ प्रानी० ॥ २ ॥ कंस जरासँध सूरमा, मारे कृष्ण गुपाल । ताको जरदकुमारने[2], माख्यो सोऊ काल ॥ प्रानी० ॥ ३ ॥ कई वार छत्री हते, परशुराम वल साज । माख्यो सोउ सुभूमिने[3], ताहि हन्यो जमराज ॥ प्रानी० ॥ ४ ॥ सुर नर खग सव वश करे, भरत नाम चक्रेश । वाहूवलपै हारकै, मान रह्यो नहिं लेश ॥

१ मेंडक । २ जरत्कुमारको । ३ सुभूमिचक्रवर्तीने ।

॥ प्रानी० ॥ ५ ॥ जिनकी भौंहैं फरकतैं, डरते इन्द फनिंद। पाँयनि परवत फोरते, खाये काल-मृगिंद ॥ प्रानी० ॥ ६ ॥ नारी संकलसारखी, सुत फाँसी अनिवार। घर वंदीखाना कहा, लोभ सु चौकीदार ॥ प्रानी० ॥ ७ ॥ अन्तर अनुभव कीजिये, बाहिर करुणाभाव। दो बातनिकरि हूजिये, द्यानत शिवपुरराव ॥ प्रानी० ॥ ८ ॥

१६७।

जैनधरम धर जीयरा ! सो चार प्रकार ॥ जैन० ॥ ॥ टेक ॥ दान शील तप भावना. निहचै व्योहार ॥ जैन० ॥ १ ॥ निहचै चारोंको धनी, चेतन शिवकार। परम्परा शिव देत है, शुभभावविथार ॥ जैन० ॥ २ ॥ दान दये बहु सुख लेय, को कहै विचार। निरधन ब्राह्मण दानतैं, लहै रतन अपार ॥ जैन० ॥ ३ ॥ घर तजि वन दिढ़ शील जे, पालैं मुनि सार। अनुव्रत सीता शीलतैं, पावक जलधार ॥ जैन० ॥ ४ ॥ तपकी महिमा को कहै, जानै नरनार। सिंघ तनिक तपस्या करी, भयो देवकुमार ॥ जैन० ॥ ५ ॥ भावन भावैं धन्य जे, तजि परिग्रहभार। मेंडक पूजा भावसों, गयो सुरगमँझार ॥ जैन० ॥ ६ ॥ नमस्कार यह जोग है, यह मंगलधार। ये ही उत्तम लोकमें, यह शरन निहार ॥

---

१ पैरोंके बलसे। २ कालरूपी सिंह। ३ शुभभावोंका विस्तार।

॥ जैन० ॥ ७ ॥ घातैं घातैं जीवको, रख लेहु उवार । द्यानत धर्म न भूलिये, संसार असार ॥ जैन० ॥ ८ ॥

१६८ । राग—आसावरी जोगिया ।

ज्ञानी ऐसो ज्ञान विचारै ॥ ज्ञानी० ॥ टेक ॥ राज सम्पदा भोग भोगवै, वंदीखाना धारै ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ धन जोवन परिवार आपतैं, ओछी ओर निहारै । दान शील तप भाव आपतैं, ऊंचेमाहिं चितारै ॥ ज्ञानी० ॥ ॥ २ ॥ दुख आये धीरज धर मनमें, सुख वैराग सँभारै । आतम दोप देखि नित झूरै, गुन लखि गरव विडारै ॥ ज्ञानी० ॥ ३ ॥ आप बड़ाई परकी निन्दा, मुखतैं नाहिं उचारै । आप दोप परगुन मुख भाषै, मनतैं शल्य निवारै ॥ ज्ञानी० ॥ ४ ॥ परमारथ विधि तीन जोगसौं, हिरदै हरप विथारै । और काम न करै जु करै तो, जोग एक दो हारै ॥ ज्ञानी० ॥ ५ ॥ गई वस्तुको सोचै नाहीं, आगमचिन्ता[1] जारै । वर्तमान वर्तै विवेकसौं, ममता बुद्धि विसारै ॥ ज्ञानी० ॥ ६ ॥ बालपने विद्या अभ्यासै, जोवन तप विस्तारै । वृद्धपने सन्यास लेयकै, आतम काज सँभारै ॥ ज्ञानी० ॥ ७ ॥ छहों दरव नव तत्त्वमाहिंतैं, चेतन सार निकारै । द्यानत मगन सदा तिसमाहीं, आप तरै पर तारै ॥ ज्ञानी० ॥ ८ ॥

---

१ आगामी-भविष्यकी चिन्ता ।

१६९ । राग—आसावरी ।

ज्ञानी ऐसो ज्ञान विचारै ॥ ज्ञानी० ॥ टेक ॥ नारि नपुंसक नर पद काया, आप अकाय निहारै ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ बामन वैश्य शूद्र औ क्षत्री, चारों भग लिँग लागे । भग वी[1] जासी भोग वि जासी, हम अविनाशी जागे ॥ ज्ञानी० ॥ २ ॥ पंडित मूरख पोथिनिमाहीं, पोथी नैनन सूझै । नैन जोति रवि चन्द उदयतैं, तेऊ अस्तत बूझै ॥ ज्ञानी० ॥ ३ ॥ कायर सूर लड़नमें गिनिये, लड़त जीव दुख पावै । सब हममें हम हैं सबमाहीं, मेरे कौन सतावै ॥ ज्ञानी० ॥ ४ ॥ कौन बजावे अरु को गावै, नाचै कौन नचावै । सुपने सा जग ख्याल मँड़ा हैं, मेरे मन यों आवै ॥ ज्ञानी० ॥ ५ ॥ एक कमाऊ एक निखट्टू, दोनों दरब पसारा । आवै सुख जावै दुख पावै, मैं सुख दुखसौं न्यारा ॥ ज्ञानी० ॥ ६ ॥ एक कुटुम्बी एक फकीरा, दोनों घर वन चाहैं । घर भी काको वन भी काको, ममता-दाहनि-दाहैं ॥ ज्ञानी० ॥ ७ ॥ सोवत जागत ब्रत अरु खातैं, गर्व निगर्व निहारै । द्यानत ब्रह्म मगन निशि वासर, करम-उपाधि विडारै ॥ ज्ञानी० ॥ ८ ॥

१७० । राग—आसावरी जोगिया ।

भाई ! ब्रह्म विराजै कैसा ? ॥ भाई० ॥ टेक ॥ जाको जान परमपद लीजे, टीक करीजे जैसा ॥ भाई०

---

१ भी ।

॥ १ ॥ एक कहै यह पवन रूप है, पवन देहको लागै। जब नारीके उदर समावै, क्यों नहिं नारी जागै ॥ भाई० ॥ २ ॥ एक कहै यह बोलै सो ही, बैन कानतैं सुनिये । कान जीवको जानैं नाहीं, यह तो बात न मुनिये ॥ भाई० ॥ ३ ॥ एक कहै यह फूल-वासना, बास नाक सब जानै । नाक ब्रह्मको वेदै नाहीं, यह भी बात न मानै ॥ भाई० ॥ ४ ॥ भूमि आग जल पवन व्योमँ मिलि, एक कहै यह हूवा । नैनादिक तत्त्वनिको देखैं, लखैं न जीया मूवा ॥ भाई० ॥ ५ ॥ धूप चाँदनी दीप जोतसौं. ये तो परगट सूझै । एक कहै है लोहूमें सो, मृतक मरो नहिं बूझै ॥ भाई० ॥ ६ ॥ एक कहै किनहू नहिं जाना, ब्रह्मादिक बहु खोजा । जानौ जीव कह्यौ क्यों तिनने, भापैं जान्यो होजा ॥ भाई० ॥ ७ ॥ इत्यादिक मतकलिपत बातैं, जो बोलैं सो विघटै । द्यानत देखनहारो चेतन, गुरुकिरपातैं प्रगटै ॥ भाई० ॥ ८ ॥

१७१ । राग—आसावरी जोगिया ।

साई कौन कहै घर मेरा ॥ साई० ॥ टेक ॥ जे जे अपना मान रहे थे, तिन सबने निरवेरा ॥ साई०॥१॥ प्रात समय नृप मन्दिर ऊपर, नाना शोभा देखी । पहर चढ़े दिन कालचालतैं, ताकी धूल न पेखी ॥

१ समझिये । २ गंध । ३ आकाश ।

॥ भाई० ॥ २ ॥ राज कलश अभिषेक लच्छमी, पहर चढ़ैं दिन पाई। भई दुपहर चिता तिस जलती, मीतों[1] ठोक जलाई ॥ भाई० ॥ ३ ॥ पहर तीसरे नाचैं गावैं, दान बहुत जन दीजे। सांझ भई सब रोवन लागे, हाहाकार करीजे ॥ भाई० ॥ ४ ॥ जो प्यारी नारीको चाहै, नारी नरको चाहै। वे नर और किसीको चाहैं, कामानल[2] तन दाहै ॥ भाई० ॥ ५ ॥ जो प्रीतम लखि पुत्र निहोरैं, सो निज सुतको लोरैं। सो सुत निज सुतसों हित ठौर[3], आवत कहत न औरैं ॥ भाई० ॥ ६ ॥ कोड़ाकोड़ि[4] दरब जो पाया, सागरसीम दुहाई। राज किया मन अब जम आवै, विपकी खिचड़ी खाई ॥ भाई० ॥७ ॥ तू नित पोखै वह नित सोखै, तू हारै वह जीतै। द्यानत जु कछु भजन बन आवै, सोई तेरो मीतै[5] ॥ भाई० ॥ ८ ॥

१७२। राग—आसावरी जोगिया।

काया! तू चल संग हमारै ॥ काया० ॥ टेक ॥ निशि दिन दोनों रहें एकठे, अब क्यों नेह निवारै ॥ काया० ॥ १ ॥ पट आभूषन सौंधे आछे, अन्न पात्र नित दीने। ते सब ले दल मल करि डारे, फिर दीनें रस भीने ॥ काया० ॥ २ ॥ पांच बरन रस पांच गंध दो, फरस

१ मित्रोंने। २ कामरूपी अग्नि. । ३ छोर-ठिकाना। ४ समुद्रके छोरतक। ५ मित्र।

आठ सुर सातैं । सब भुगताये मूम कहाये, दान दियो नहिं जातैं ॥ काया० ॥ ३ ॥ तेरे कारन जीव सँहारे, बोल्यो झूठ अपारा । चोरी की परनारी सेई, डूबे परिग्रह धारा ॥ काया० ॥ ४ ॥ तोहि संग उद्यम करि पोपे, मूलि न अपना कोई । एतेपर तू रीझै नाहीं, बुद्धि कहांतैं सोई ॥ काया० ॥ ५ ॥ द्यानत सुख दीये तू जानै, कृतघनि ! लख उपगारा । मिथ्या मोहनि मरत प्रलापै, भववनडोलनहारा ॥ काया० ॥ ६ ॥

१७३ । राग—आसावरी जोगिया ।

जीव ! तैं मेरी सार न जानी ॥ जीव० ॥ टेक ॥ हम तुम बहुत बार मिल बिछुरे, आदि किन्हीं न पिछानी ॥ जीव० ॥ १ ॥ पाप पुन्य दो तुरके साथी, नरक सुरगलौं दौरैं । कह तैनें को दिढ़ करि पोष्यो, सो करि है तुम गौरैं ॥ जीव० ॥ २ ॥ सीस आंख मुख कान पान पद, सब ही पच पच मूए । तैं अपनो हित क्यों नाहिं कीना, हम कब आड़े हूए ॥ जीव० ॥ ३ ॥ जो कोई जन चाकर राखै, कण दै काम करावै । तू क्यों सोय रह्यो निशिवासर, पछताये क्या पावै ॥ जीव० ॥४॥ मैं करई तूँबरि जो जानै, परिग्रह भार निकारै । छयकर राग दोष तप सोखै, भव जल पार उतारै ॥ जीव० ॥५॥ नर कायाको सुरपति तरसैं, कब मैं लैऊं दिच्छा ।

---

१ बीचमें पड़े—विरोधी हुए ।

आगें पंच महाव्रत धरियें, करि यों द्यानत मिच्छा ॥ जीव० ॥ ६ ॥

१७४। राग–रामकली।

ऋषभदेव ऋषदेव महाई ॥ ऋषभ० ॥ टेक ॥ अजित अजितरिपु संभव संभव, अभिनन्दन नन्दन लव लाई ॥ ऋषभ० ॥ १ ॥ सुमति सुमति भवि पदम पदम[1] अलि[2]. दंत सुपास सुपास भलाई। चितचकोरचंदा चंदप्रभ. पुहपदन्त पुहपनि[3] भजि भाई! ॥ ऋषभ० ॥ २ ॥ शीतल शीतल जड़िव भ्द्रसें, श्रेयान श्रेयान जोत जगाई। वासुपूज्य वासव पद पूजें, विमल विमल कीरति जग छाई ॥ ऋषभ ० ॥ ३ ॥ गुन अनन्त अब अन्त अनंत हैं, धरम धरमवरपा[4] वरपाई। शान्ति शान्त कुंथ्वादि जन्तुपर, कुंथुनाथ करुणा करवाई ॥ ऋषभ० ॥ ४ ॥ अरह अरहविधि मल्ल मल्लिवर, मुनिसुव्रत मुनि सुव्रत दाई। नमि नमि सुरनर नेमि धरमरथ, नेमिप्रभू[5] काटे भव–काई ॥ ऋषभ० ॥ ५ ॥ पास पास छेदी चहुँगतिकी, महावीर महावीर वड़ाई। द्यानत परमानंद पद कारन, चौवीसी नामारथ[6] गाई ॥ ऋषभ० ॥ ६ ॥

१७५। ✓

झूठा सपना यह संसार ॥ झूठा० ॥ टेक ॥ दीख

---

१ कमल। २ भ्रमर। ३ पुष्पोंमे। ४ धरणेन्द्र। ५ थकी नेमि अर्थात् धुरी। ६ नामोंका अर्थ।

है विनसत नाहिं वार ॥ झूठा० ॥ १ ॥ मेरा घर सबतैं सिरदार, रह न सकै पल एकमँझार ॥ झूठा० ॥ २ ॥ मेरे धन सम्पति अति सार, छांड़ि चलै लागै न अवार ॥ झूठा० ॥ ३ ॥ इन्द्रीविषै विषैफल धार, मीठे लगैं अन्त खयकार ॥ झूठा० ॥ ४ ॥ मेरो देह काम उनहार, सो तन भयो छिनकमें छार ॥ झूठा० ॥ ५ ॥ जननी तात भ्रात सुत नार, स्वारथ विना करत हैं ख्वार ॥ झूठा० ॥ ६ ॥ भाई शत्रु होंहिं अनिवार, शत्रु भये भाई वहु प्यार ॥ झूठा० ॥ ७ ॥ द्यानत सुमरन भजन अधार, आग लगैं कछु लेहु निकार ॥ झूठा० ॥ ८ ॥

१७६ ।

किसकी भगति किये हित होहि ॥ किसकी० ॥ टेक ॥ झूठ वात ना भावै मोहि ॥ किसकी० ॥ १ ॥ राम भजो दूजो जग नाहिं, आयो जोनीसंकटमाहिं[1] ॥ किसकी० ॥ २ ॥ कृष्ण भजो किन तीनों काल, निरदै ह्वै मार्‌यो शिशुपाल ॥ किसकी० ॥ ३ ॥ ब्रह्मा भजो सर्वजग-व्याप, खोई सृष्टि सह्यो दुख आप ॥ किसकी० ॥ ४ ॥ रुद्र भजो सबतैं सिरदार, सब जीवनिको मारनहार ॥ किसकी० ॥ ५ ॥ एक रूपको कीजे ध्यान, चिन्ता करै उसे हैरान ॥ किसकी० ॥ ६ ॥ नर कानिश सदा रे! भाय, सो गजमुख परगट पशु-

---

१ वीच नसंकटमे—गर्भवासमे ।

काय ॥ किसकी० ॥ ७ ॥ इन्द्र भजो निवसै सुरलोय, सो भी मरै अमर नहिं होय ॥ किसकी० ॥ ८ ॥ देवी भजो भजैं सब लोग, बकरे मारैं महा अजोग ॥ किसकी० ॥ ९ ॥ भजो शीतला थिर मन लाय, देखो ! डाँयनि लड़के खाय ॥ किसकी० ॥ १० ॥ किनहिं न जान्यो अपरंपार, झूठे सरब भगत संसार ॥ किसकी० ॥ ११ ॥ द्यानत नाम भजो सुखमूल, सो प्रभु कहां किधौं नभ[1]-फूल ॥ भव[2] किसकी० ॥ १२ ॥

१७७।

परमेसुरकी कैसी रीत, मोहि बताओ मेरे मीत ॥ परमेसुर० ॥ टेक ॥ उपजावै संसारी सोय, मारे सो हत्यारो होय ॥ परमेसुर० ॥ १ ॥ जल थल अगन गगन भुविमाहिं, लघु दीरघ कीजे किहि ठाहिं ॥ परमेसुर० ॥ २ ॥ घट घट व्यापी सबमें वही, एक एक क्यों मारै सही ॥ परमेसुर० ॥ ३ ॥ पाप पुन्य करवावै आप, वेद कहै क्यों सुमरन जाप ॥ परमेसुर० ॥ ४ ॥ मारै दुष्ट सुष्ट प्रतिपाल, दुष्ट बनावै क्यों विकराल ॥ परमेसुर० ॥ ५ ॥ जानै नहीं दुष्ट अज्ञान, ज्ञान विना कैसें भगवान ॥ परमेसुर० ॥ ६ ॥ राग न द्वेष न ज्ञायकरूप, द्यानत दरपन ज्यों चिद्रूप ॥ परमेसुर० ॥ ७ ॥

---

१ आकाशपुष्प। २ सज्जन।

१७८ ।

एक ब्रह्म तिहुँलोकमँझार, ऐसैं कहैं बनै नाहिं यार ॥ एक० ॥ टेक ॥ और हुकमतैं मारै और, और पुकार करै उस ठौर ॥ एक० ॥ १ ॥ षट रस भोजन जीमैं धीर, भीख न पावै एक फकीर ॥ एक० ॥ २ ॥ धरमी सुरगमाहिं सुख करै, पापी नरक जाय दुख भरै ॥ एक० ॥ ३ ॥ एकरूप अविनाशी वस्त, खंड खंड क्यों भया समस्त ॥ एक० ॥ ४ ॥ शुद्ध निरंजन शुचि अविकार, क्यों कर लयो गरभ अवतार ॥ एक० ॥ ५ ॥ करम विना इच्छा क्यों भई, इच्छा भई शुद्धता गई ॥ एक० ॥ ६ ॥ जीव अनन्त भरे भुविमाहिं, द्यानत कर्म कटैं शिव जाहिं ॥ एक० ॥ ७ ॥

१७९ ।

त्रिभुवनमें नामी, कर करुना जिनस्वामी ॥ त्रिभुवन० ॥ टेक ॥ चहुँगति जनम मरन किमि भाख्यो, तुम सब अंतरजामी ॥ त्रिभुवन० ॥ १ ॥ करमरोगके वैद तुम्ही हो, करों पुकार अकामी । द्यानत पूरव पुन्य उदयतैं, शरन तिहारी पामी ॥ त्रिभुवन० ॥ २ ॥

१८० । राग—पंचम ।

सुन री ! सखी ! जहाँ नेम गये तहाँ, मोकहँ ले पहुँचावो री—हां ॥ सुन० ॥ टेक ॥ घर आँगन न सुहाय खिनक मुझ, अब ही पीव मिलावो री—हां ॥ सुन०

॥१॥ धन जोवन मेरे काम न एहै, प्रभुकी बात सुनावो री–हां ॥ सुन० ॥ २ ॥ द्यानत दरस दिखाय स्वामिको, भवआताप बुझावो री–हां ॥ ॥ सुन० ॥ ३ ॥

१८१।

तजि जो गये पिय मोह अनाहक (?), यह दुख कैसें भरिहौं री ॥ तजि० ॥ टेक ॥ मोसौं मोह रंच नहिं कीनों, मैं जा पाँयनि परिहौं री ॥ तजि० ॥ १ ॥ और ठौर मोहि दोष लगैगो, पीतमको सँग करिहौं री । द्यानत कृपा करैं स्वामी जब, तब भवसागर तरिहौं री ॥ तजि० ॥२॥

१८२।

हां चल री ! सखी जहाँ आप विराजत, नेमि नवल व्रतधारी री ! ॥ टेक ॥ जाय कहैं प्रभुसों विनती करि, किहिं औगुन जु विसारी री ॥ हां चल० ॥१॥ रजमति कहत बात मैं जानी, करी मुकतसों यारी री ! द्यानत ता वनिताके ऊपर, तन मन वारौं डारी री! ॥ हां चलि० २

१८३।

कहा री ! करौं कित जाऊं सखी मैं, नेमि गये वन ओरै री ॥ टेक ॥ कहा चूक प्रभुसों मैं कीनीं, जो पीउ मोह न लोरै[1] री ॥ कहा री० ॥ १ ॥ अब वहां जैहौं विनती करिहौं, सनमुख ह्वै कर जोरै री । द्यानत हमैं तारल्यो स्वामी, लैहुँ बलाइ[2] किरोरै[3] री ॥ कहा री० ॥२॥

---

१ साथ रक्खे-प्यार करैं । २ बलैया । ३ करोडों ।

१८४ ।

हमारे ये दिन यों ही गये जी ॥ हमारे० ॥ टेक ॥ कर न लियो कछु जप तप जी, कछु जप तप, वहु पाप विसाहे[1] नये जी ॥ हमारे० ॥ १ ॥ तन धन ही निज मान रहे, निज मान रहे, कवहूँ न उदास भये जी । द्यानत जे करि हैं करुना, करि हैं करुना, तेइ जीव लेखेमें लये जी ॥ हमारे० ॥ २ ॥

१८५ ।

मैं नूं भावैजी प्रभु चेत ना, मैं नूं भावै जी० ॥ टेक ॥ गुण रतनत्रय आदि विराजै, निज गुण काहू देत ना ॥ मैं नूं० ॥ १ ॥ सिद्ध विशुद्ध सदा अविनाशी, परगुण कवहूं लेत ना ॥ मैं नूं० ॥ २ ॥ द्यानत जो ध्याऊं सो पाऊं, पुद्गलसों कछु हेत[2] ना ॥ मैं नूं० ॥ ३ ॥

१८६ । राग—धमाल ।

मैं वन्दा स्वामी तेरा ॥ मैं० ॥ टेक ॥ भव-भय-भंजन आदि निरंजन, दूर करो दुख मेरा ॥ मैं० ॥ १ ॥ नाभिरायनन्दन जगवन्दन, मैं चरननका चेरा ॥ मैं० ॥ ॥ २ ॥ द्यानतऊपर करुना कीजे, दीजे शिवपुर-डेरा ॥ मैं० ॥ ३ ॥

---

१ कमाये । २ मतलव ।

१८७।

त्यांगो त्यागो मिथ्यातम, दूजो नहीं जाकी सम, तोह दुख दाता तिहूँ, लोक तिहू काल ॥ त्यागो० ॥१॥ चेतन अमलरूप, तीन लोक ताको भूप, सो तो डास्यो भवकूप, दे नाहिं निकाल ॥ त्यागो० ॥ २ ॥ एकसौ चालीस आठ, प्रकृतिमें यह गांठ, जाके त्यागैं पावै शिव, गहैं भव जाल ॥ त्यागो० ॥ ३ ॥ द्यानत यही जतन, सुनो तुम भविजन, भजो जिनराज तातैं, भाज जै है हाल ॥ त्यागो० ॥ ४ ॥

१८८।

मानों मानों जी चेतन यह, विषै भाग छांड़ देहु, विषै की समान कोऊ, नाहीं विष आन ॥ मानों० ॥ टेक ॥ तात मात पुत्र नार, नदी नाव ज्यों निहार, जोवन गुमान जानों, चपला समान ॥ मानों० ॥ १ ॥ हाथी रथ प्यादे वाजें, इनसों न तेरो काज, सुपने समान देख, कहा गरवान ॥ मानों० ॥ २ ॥ ये तो देहके मिलापी, तू तो देहसों अव्यापी, ज्ञान दृष्टि धर देखि, चेतिये सुजान ॥ मानों० ॥ ३ ॥

१८९।

दुरगति गमन निवारिये, घर आव सयाने नाह हो

---

१ इसके प्रत्येक चरणके अन्तमें एक 'है' शब्द मिलानेसे इकतीसा कवित्त (मनहरन) बन जाता है । २ इसके अन्तचरणोंमे 'रे' मिलानेसे मनहरन बन जावेगा । ३ बिजली । ४ घोड़े । ५ नाथ ।

॥ दुरगति० ॥ टेक ॥ पर घर फिरत वहुत दिन वीते, सहित्त विविध दुखदाह हो । निकसि निगोद पहुँचवो शिवपुर, वीच वसैं क्या लाह[1] हो ॥ दुरगति० ॥ २ ॥ द्यानत रतनत्रय मारग चल, जिहिं मग चलत हैं सोह[2] हो ॥ दुरगत० ॥ ३ ॥

१९० ।

स्वामी नाभिकुमार ! हमकौं क्यों न उतारो पार ॥ स्वामी० ॥ टेक ॥ मंगलमूरति है अविकार, नाम भजैं भजैं विघन अपार ॥ स्वामी० ॥ १ ॥ भवभयभंजन महिमा सार, तीन लोकजिय तारनहार ॥ स्वामी० ॥२॥ द्यानत आये शरण तुम्हार, तुमको है सव शरम हमार ॥ स्वामी० ॥ ३ ॥

१९१ ।

चेतन ! मान हमारी वतियां ॥ चेतन० ॥ टेक ॥ यह देही तुझ लार न चलसी, क्यों पोपै दिन रतियां ॥ चेतन० ॥ १ ॥ जीवघाततैं नरक जायसी, आँच सहोगे ततियां ॥ चेतन० ॥ २ ॥ द्यानत सुरग मुकति सुखदाई, करुणा आनो छतियां ॥ चेतन० ॥ ३ ॥

१९२ ।

कव हौं मुनिवरको व्रत धरिहौं ॥ कव० ॥ टेक ॥ सकल परिग्रह तिन[3] सम तजिकै, देहसों नेह न करि-

---

१ लाभ । २ महाजन । ३ तृण —तिनकाके समान ।

हौं ॥ कब० ॥ १ ॥ कब बावीस परीषह सहिकै, राग दोष परिहरिहौं ॥ कब० ॥ २ ॥ द्यानत ध्यान-यान[1] कब चढ़िकै, भवदधि पार उतरिहौं ॥ कब० ॥ ३ ॥

१९३।

आतम अनुभव सार हो, अब जिय सार हो, प्राणी ॥ आतम० ॥ टेक ॥ विषयभोगफणिंने[2] तोहि काट्यो, मोह लहर चढ़ी भार हो ॥ आतम० ॥ १ ॥ याको मंत्र ज्ञान है भाई, जप तप लहरिउतार हो ॥ आतम० ॥ २ ॥ जनमजरामृत रोग महा ये, तैं दुख सह्यो अपार हो ॥ आतम० ॥ ३ ॥ द्यानत अनुभव-औषध पीके, अमर होय भव पार हो ॥ आतम० ॥ ४ ॥

१९४।

प्राणी ! सोऽहं सोऽहं ध्याय हो ॥ प्राणी० ॥ टेक ॥ बाती दीपं[3] परस दीपक है, बूंद जु उदधि कहाय हो। तैसैं परमातम ध्यावै सो, परमातम ह्वै जाय हो ॥ प्राणी० ॥ १ ॥ और सकल कारज है थोथो, तोहि महा दुखदाय हो। द्यानत यही ध्यानहित कीजे, हूजे त्रिभुवनराय हो ॥ प्राणी० ॥ २ ॥

१९५।

चेतन ! तुम चेतो भाई, तीन जगतके नाथ ॥

---

१ ध्यानरूपी जहाज। २ भुजंगने। ३ दीपका स्पर्श करके, दीपकके सयोगसे।

चेतन० ॥ टेक ॥ ऐसो नरभव पायकैं, काहे विषया लवलाई ॥ चेतन० ॥ १ ॥ नाहीं तुमरी लाइकी[1], जोवन धन देखत जाई । कीजे शुभ तप त्यागकै, द्यानत हूजे अकषाई ॥ चेतन० ॥ २ ॥

१९६ ।

नेमिजी तो केवलज्ञानी, ताहीको ध्याऊं ॥ नेमिजी० ॥ टेक ॥ अमल अखंडित चेतनमंडित, परमपदारथ पाऊं ॥ नेमिजी० ॥ १ ॥ अचल अबाधित निज गुण छाजत, वचनमें कैसे बताऊं । द्यानत ध्याइये शिवपुर जाइये, बहुरि न जगमें आऊं ॥ नेमि० ॥ २ ॥

१९७ ।

चेतनजी ! तुम जोरत हो धन, सो धन चलत नहीं तुम लार ॥ चेतन० ॥ टेक ॥ जाको आप जान पोषत हो, सो तन जलकै ह्वै है छार ॥ चेतन० ॥ १ ॥ विषय भोगके सुख मानत हो, ताको फल है दुःख अपार । यह संसार वृक्ष सेमरको[2], मान कह्यो हौं कहत पुकार ॥ चेतन० ॥ २ ॥

१९८ ।

प्राणी ! तुम तो आप सुजान हो, अब जी सुजान हो ॥ प्राणी० ॥ टेक ॥ अशुचि अचेत विनश्वर रूपी,

---

१ योग्यता । २ सेमर वृक्षके फूल देखनेमें सुन्दर होते हैं, परन्तु उनमे जो फल लगते हैं, वे निस्सार होते हैं ।

पुद्गल तुमतैं आन हो । चेतन पावन अक्षय अरूपी, आतमको पहिचान हो ॥ प्राणी० ॥१॥ नाव धरेकी लाज निबाहो, इतनी विनती मान हो। भव भव दुखको जल दे द्यानत, मित्र! लहो शिवथान हो ॥ प्राणी० ॥ २ ॥

१९९।

आपमें आप लगा जी सु हौं तो ॥ आप० ॥ टेक ॥ सुपनेका सुख दुख किसके, सुख दुख किसके. मैं तो अनुभवमाहिं जगा जी-सु हौं तो ॥ आप० ॥ १ ॥ पुद्गल तो ममरूप नहीं, ममरूप नहीं, जैसेका तैसा सगा जी-सु हौं तो ॥ आप० ॥ २ ॥ द्यानत मैं चेतन वे जड़, वे जड़ हैं, जड़सेती पगा जी, सु हौं तो ॥ आप० ॥ ३ ॥

२००।

वीतत ये दिन नीके, हमको ॥ वीतत० ॥ टेक ॥ भिन्न दरव तत्वनितैं धारे, चेतन गुण हैं जीके ॥ वीतत० ॥ १ ॥ आप सुभाव आपमैं जान्यो, सोइ धर्म है टीके ॥ वीतत० ॥ २ ॥ द्यानत निज अनुभव रस चाख्यो, पररस लागत फीके ॥ वीतत० ॥ ३ ॥

२०१।

कौन काम अब मैंने कीनों, लीनों सुर अवतार हो ॥ कौन० ॥टेक॥ गृह तजि गहे महाव्रत शिवहित, विफल फल्यो आचार हो ॥ कौन० ॥१॥ संयम शील ध्यान तप

खय भयो, अव्रत विपय दुखकार हो । द्यानत कव यह थिति पूरी है, लहों मुकतपद सार हो ॥ कौन० ॥२॥

२०२।

रे ! मन गाय लै, मन गाय लै, श्रीजिनराय ॥ रे मन० ॥ टेक ॥ भवदुख चूरैं आनंद पूरैं, मंगलके समुदाय ॥ रे मन० ॥ १ ॥ सबके स्वामी अन्तरजामी, सेवत सुरपति पाय । कर ले पूजा और न दूजा, द्यानत मन-वच-काय ॥ रे मन० ॥ २ ॥

२०३। राग—प्रभाती ।

देखे जिनराज आज, राजऋद्धि पाई ॥ देखे० ॥ टेक ॥ पहुपवृष्टि महा इष्ट, देवदुंदुभी सुमिष्ट, शोक करै भ्रष्ट सो, अशोकतरु वड़ाई ॥ देखे० ॥ १ ॥ सिंहासन झलमलात, तीन छत्र चित सुहात, चमर फरहरात मनो, भगति अति वढ़ाई ॥ देखे० ॥ २ ॥ द्यानत भामण्डलमें, दीसैं परजाय सात, वानी तिहुँकाल झरै, सुरशिवसुखदाई ॥ देखे० ॥ ३ ॥

२०४।

साधजीने वानी तनिक सुनाई ॥ साधजी० ॥ टेक ॥ गौतम आदि महा मिथ्याती, सरधा निहचै आई ॥ साधजी० ॥ १ ॥ नृप विभूति छयवान विचारी, वारह भावन भाई ॥ साधजी० ॥ २ ॥ द्यानत हीन शकति हू देखौ, श्रावक पदवी पाई ॥ साधजी० ॥ ३ ॥

२०५।

वे प्राणी ! सुज्ञानी, जान जान जिनवानी ॥ वे० ॥ ॥ टेक ॥ चन्द सूर हू दूर करैं नाहिं, अन्तरतमकी हानी ॥ वे० ॥ १ ॥ पच्छ सकल नय भच्छ करत हैं, स्याद-वादमें सानी ॥ वे० ॥ २ ॥ द्यानत तीनभवन-मन्दिरमें, दीवट एक बखानी ॥ वे० ॥ ३ ॥

२०६।

लाग रह्यो मन चेतनसों जी ॥ लाग० ॥ टेक ॥ सेवक सेवसेव सेवक मिल, सेवा कौंन करै पनसों जी ॥ लाग० ॥ १ ॥ ज्ञान सुधा पी वम्यो विषय विष, क्यों कर लागि सकै तनसौं जी ॥ लाग० ॥२॥ द्यानत आप-आप निरविकलप, कारज कवन भवन निवसों जी ॥ लाग० ॥ ३ ॥

२०७।

हम आये हैं जिनभूप !, तेरे दरसनको ॥ हम० ॥ टेक ॥ निकसे घर आरतिकूप, तुम पद परसनको ॥ हम० ॥ १ ॥ वैननिसों सुगुन निरूप, चाहैं दरसनकों ॥ हम० ॥ २ ॥ द्यानत ध्यावै मन रूप, आनँद वरसन को ॥ हम० ॥ ३ ॥

२०८।

तुम तार करुनाधार स्वामी ! आदिदेव निरंजनो ॥ ॥ तुम० ॥ टेक ॥ सार जग आधार नामी, भविक जन-

मनरंजनो ॥ तुम० ॥ १ ॥ निराकार जमी अकामी, अमल देह अमंजनो ॥ तुम० ॥ २ ॥ करौ द्यानत मुकतिगामी, सकल भव-भय-भंजनो ॥ तुम० ॥ ३ ॥

२०९ ।

जिनवानी प्रानी! जान लै रे ॥ जिनवानी० ॥ टेक ॥ छहों दरव परजाय गुन सरव, मन नीके सरधान लै रे ॥ जिनवानी० ॥ १ ॥ देव धरम गुरु निहचै धर उर, पूजा दान प्रमान लै रे ॥ जिनवानी० ॥ २ ॥ द्यानत जान्यो जैन वखान्यो, ॐ अक्षर मन आन लै रे ॥ जिनवानी० ॥ ३ ॥

२१० । राग—ललित ।

ये दिन आछे लहे जी लहे जी ॥ ये० ॥ टेक ॥ देव धरम गुरुकी सरधा करि, मोह मिथ्यात दहे जी दहे जी ॥ ये० ॥ १ ॥ प्रभु पूजे सुने आगमको, सतसंगतिमाहिं रहे जी रहे जी ॥ ये० ॥ २ ॥ द्यानत अनुभव ज्ञानकला कछु, संजम भाव गहे जी गहे जी ॥ ये० ॥ ३ ॥

२११ ।

इक अरज सुनो साहिब मेरी ॥ इक० ॥ टेक ॥ चेतन एक बहुत जड़ घेरयो, दई आपदा बहुतेरी ॥ ॥ इक० ॥ १ ॥ हम तुम एक दोय इन कीने, विन कारन बेरी गेरी ॥ इक० ॥ २ ॥ द्यानत तुम तिहुँ ज-

१ यमी यावज्जीवत्यागी ।

गके राजा, करो जु कछू खातिर मेरी ॥ इक० ॥ ३ ॥

२१२।

जिन साहिब मेरे हो, निवाहिये दासको ॥ जिन० ॥ टेक ॥ मोह महातम घेर भयो है, कीजिये ज्ञान प्रकासको ॥ जिन० ॥ १ ॥ लोभरोगके वैद प्रभूजी, औषध द्यो गर्द[1] नासको ॥ जिन० ॥ २ ॥ द्यानत क्रोध-की आग बुझावो, वरस छिमा जलरासको ॥ जिन० ॥ ॥ ३ ॥

२१३।

चेतन! मान लै बात हमारी ॥ चेतन० ॥ टेक ॥ पुद्गल जीव जीव पुद्गल नाहिं, दोनोंकी विधि न्यारी ॥ चेतन० ॥ १ ॥ चहुँगतिरूप विभाव दशा है, मोख-माहिं अविकारी। द्यानत दरवित सिद्ध विराजै, सोहं जपि सुखकारी ॥ चेतन० ॥ २ ॥

२१४।

निज जतन करो गुन-रतननिको, पंचेन्द्रीविषय सभी तसकर ॥ निज० ॥ टेक ॥ सत्य कोट खाई करुनामय, वाग विराग छिमा भुवि भर ॥ निज० ॥ १ ॥ जीव भूप तन नगर वसै है, तहँ कुतवाल धरमको कर ॥ ॥ निज० ॥ २ ॥ द्यानत जव भंडार न जावै, तव सुख पावै साहु अमर ॥ निज० ॥ ३ ॥

---

१ वीमारी।

२१५।

आतम जाना, मैं जाना ज्ञानसरूप ॥ आतम० ॥ टेक ॥ पुद्गल धर्म अधर्म गगन जंम, सब जड़ मैं चिद्रूप ॥ आतम० ॥ १ ॥ दरब भाव नोकर्म नियारे, न्यारो आप अनूप ॥ आतम० ॥ २ ॥ द्यानत पर-परनति कब विनसै, तब सुख विलसै भूप ॥ आतम० ॥ ३ ॥

२१६।

सांचे चन्द्रप्रभू सुखदाय ॥ सांचे० ॥ टेक ॥ भूमि सेत अम्रतवरपाकरि, चंद नामतैं शोभा पाय ॥ सांचे० ॥ १ ॥ नर वरदाई कौन बड़ाई, पशुगन तुरत किये सुरराय ॥ सांचे० ॥ २ ॥ द्यानत चन्द असंखनिके प्रभु, सारथ नाम जपों मन लाय ॥ सांचे० ॥ ३ ॥

२१७।

ए मान ये मन कीजिये भज प्रभु तज सब बात हो॥ ए मन० ॥ टेक ॥ मुख दरसत सुख बरसत प्रानी, विघन विमुख ह्वै जात हो ॥ ए मन० ॥ १ ॥ सार निहार यही शुभ गतिमें, छह मत मानै ख्यात हो ॥ ॥ ए मन० ॥ २ ॥ द्यानत जानत स्वामि नाम धन, जस गावैं उठि प्रात हो ॥ ए मन० ॥ ३ ॥

२१८।

सो हां दीव (सोभा देवें ?) साधु तेरी वातड़ियां॥

---

१ कालद्रव्य। २ यथा नाम तथा गुण।

सोहां० ॥ टेक ॥ दोष मिटावैं हरष बढ़ावैं, रोग सोग भय घातड़ियां ॥ सोहां० ॥ १ ॥ जग दुखदाता तुमही साता, धनि ध्यावैं उठि प्रातड़ियां ॥ सोहां ॥ ॥ २ ॥ द्यानत जे नरनारी गावैं, पावैं सुख दिन रातड़ियां ॥ सोहां ॥ ३ ॥

२१९ ।

तैं चेतन करुणा न करी रे ॥ तैं० ॥ टेक ॥ यातैं पूरी आव न पावै, आँरंभ रीति हिये पकरी रे ॥ तैं० ॥ ॥ १ ॥ आपन तिन[1] सम दुःख न सहिकै, औरन मारत लै लकरी रे ॥ तैं० ॥ २ ॥ द्यानत आप समान सबै हैं, कुंथू आदिक अन्त करी[2] रे ॥ तैं० ॥ ३ ॥

२२० ।

काम सरे सब मेरे, देखे पारसस्वाम ॥ काम० ॥ टेक ॥ सपत फना अहि सीस विराजै, सात पदारथ धाम ॥ काम० ॥ १ ॥ पदमासन शुभ बिंब अनूपम, श्याम-घटा अभिराम ॥ काम० ॥ २ ॥ इंद फनिंद नरिंदनि स्वामी, द्यानत मंगलठाम ॥ काम० ॥ ३ ॥

२२१ । ✓

तेरो संजम बिन रे, नरभव निरफल जाय ॥ तेरो० टेक ॥ वरप मास दिन पहर महूरत, कीजे मन वच

---

१ तिनका [तृण] के समान । २ कुंथुआदि छोटे प्राणियोंसे लेकर ' अन्त करी ' अर्थात् हाथी जैसे बड़े जीवोंतक ।

काय ॥ तेरो० ॥ १ ॥ सुरग नरक पशु गतिमें नाहीं, कर आलस छिटकाय ॥ तेरो० ॥ २ ॥ द्यानत जा विन कवहुँ न सीझैं, राजविषैं जिनराय ॥ तेरो० ॥३॥

२२२ ।

जिनरायके पाय सदा शरनं ॥ जिन० ॥ टेक ॥ भव जल पतित निकारन कारन, अन्तरपापतिमिर हरनं ॥ जिनराज० ॥ १ ॥ परसी भूमि भई तीरथ सो, देव-मुकुट-मनि-छवि धरनं ॥ जिनराज० ॥ २ ॥ द्यानत प्रभु-पद-रज कव पावै, लागत भागत है मरनं ॥ जिनराज० ॥ ३ ॥

२२३ ।

परमारथ पंथ सदा पकरौ ॥ परमारथ० ॥ टेक ॥ कै अरचा परमेश्वरजीकी, कै चरचा गुन चित्त धरौ ॥ परमारथ० ॥ १ ॥ जप तप संजम दान छिमा करि, परधन परतिय देख डरौ ॥ परमारथ० ॥ २ ॥ द्यानत ज्ञान यही है चोखा, ध्यानसुधामृत पान करौ ॥ परमारथ० ॥ ३ ॥

२२४ ।

हथनापुर वंदन जइये हो ॥ हथनापुर० ॥ टेक ॥ शान्ति कुंथु अर मल्ल विराजैं, पूजा करि सुख पइये हो ॥ हथनापुर० ॥ १ ॥ श्रेयँसकुमर भयो दानेश्वर, सो दिन अव लौं गइये हो ॥ हथनापुर० ॥ २ ॥ द्यानत

वन्दौं थानक नामी, स्वामीकी लौं लइये हो ॥ हथ-
नापुर० ॥ ३ ॥

२२५।

सुरनरसुखदाई, गिरनारि चलौ भाई ॥ सुर० ॥टेक॥
बाल जती नेमीश्वर स्वामी, जहँ शिवरिद्धि कमाई ॥
सुर० ॥ १ ॥ कोड़ बहत्तर सात शतक मुनि, तहँ
पंचमगति पाई ॥ सुर० ॥ २ ॥ तीरथ महा महाफल-
दाता, द्यानत सीख बताई ॥ सुर० ॥ ३ ॥

२२६।

भाई धनि मुनि ध्यान लगायके खरे हैं ॥ भाई० ॥
टेक ॥ मूसल भारसी धार परै है, बिजुली कड़कत
सोर करै है ॥ भाई० ॥ १ ॥ रात अँध्यारी लोक डरे
हैं, साधुजी आपनि करम हरे हैं ॥ भाई० ॥ २ ॥
झंझा पवन चहूँ दिशि बाजैं, बादर घूम घूम अति गाजैं
॥ भाई० ॥ ३ ॥ डंस मसक बहु दुख उपराजैं, द्यानत
लाग रहे निज काजैं ॥ भाई० ॥ ४ ॥

२२७। राग—सोरठ।

निरविकलप जोति प्रकाश रही ॥ निर० ॥ टेक ॥
ना घट अन्तर ना घट बाहिर, वचननिसौं किनहू न
कही ॥ निर० ॥ १ ॥ जीभ आंख बिन चाखी देखी,
हाथनिसौं किनहू न गही ॥ निर० ॥ २ ॥ द्यानत

निज—सर-पद्म[1]-भ्रमर है, समता जोरैं साधु लही ॥ निर० ॥ ३ ॥

२२८ ।

अनहद शवद सदा सुन रे ॥ अनहद० ॥ टेक ॥ आपहि गनै और न जानै, कान विना सुनिये धुन रे ॥ अनहद० ॥ १ ॥ भ्रमर गुंज सम होत निरन्तर, ता अन्तरगत चित चुन रे ॥ अनहद० ॥ २ ॥ द्यानत तब लौं जीवनमुक्ता, लागत नाहिं करम—घुन रे ॥ अनहद० ॥ ३ ॥

२२९ ।

गिरनारिपै नेमि विराजत हैं ॥ गिर० ॥ टेक ॥ काउसग्ग[2] लम्बित भुज दोऊ, वन गज पूजा साजत हैं ॥ गिर० ॥ १ ॥ नासादृष्टि विलोक सिंह मृग, वैर जनमके भाजत हैं ॥ गिर० ॥ २ ॥ द्यानत सो गिरि वन्दत प्रानी, पुन्य बहुत उँपराजत[3] हैं ॥ गिर० ॥ ३ ॥

२३० ।

अब मैं जाना आतमराम ॥ अब० ॥ टेक ॥ इह परलोक थोक सुख साधै, तज चिन्ता धन धाम ॥ अब० ॥ १ ॥ जनम मरन भय दूर भगाया, पाया अमर मुकाम ॥ अब० ॥ २ ॥ द्यानत ज्ञान सुधारस चाखो, नाखो विष दुख ठाम ॥ अब० ॥ ३ ॥

---

१ कमल । २ कायोत्सर्ग । ३ उपार्जित करते हैं, कमाते है ।

२३१ । राग—करिखा ।

जानो धन्य सो धन्य सो धीर वीरा । मदन सौ सुभट जिन, चटक दे पट कियो ॥ धन्य० ॥ टेक ॥ १ ॥ पांच-इन्द्री-कटक झटक सब वश कस्यो, पटक मन भूप कीनों जँजीरा ॥ धन्य सो० ॥ २ ॥ आस रंचन नहीं पास कंचन नहीं, आप सुख सुखी गुन गन गँभीरा ॥ धन्य सो० ॥ ३ ॥ कहत द्यानत सही, तरन तारन वही, सुमर लै संत भव उदधि तीरा ॥ धन्य सो० ॥४॥

२३२ । ✓

जिन जपि जिन जपि, जिन जपि जीयरा ॥ जिन० ॥ टेक ॥ प्रीति करि आवै सुख, भीति करि जावै दुख, नित ध्यावै सनमुख, ईति नावै नीयरा ॥ जिन० ॥१॥ मंगल प्रवाह होय, विघनका दाह धोय, जस जागै तिहुँ लोय, शांत होय हीयरा ॥ जिन० ॥ २ ॥ द्यानत कहां लौं कहै, इन्द्र चन्द्र सेवा वहै, भव दुख पावकको, भक्ति नीर सीयरा ॥ जिन० ॥ ३ ॥

२३३ । राग—जैजवन्ती ।

महावीर जीवाजीव खीर निर पाप ताप, नीर तीर धरमकी जर हैं ॥ महावीर० ॥ टेक ॥ आश्रव स्रवत नाहिं, बँधत न बंधमाहिं, निरजरा निजरत, संवरके घर हैं ॥ महावीर० ॥ १ ॥ तेरमौं है गुन-

---

१ इस टेकका अर्थ समझमें नहीं आया, दोनों प्रतियोंके पाठोंमें भ्रम है ।

धान, सोहत सुकल ध्यान, प्रगट्यो अनन्त ज्ञान, मुकतके वर हैं ॥ महावीर० ॥ २ ॥ सूरज तपत करै, जड़ता हू चंद धरै, द्यानत भजो जिनेश, दोऊ दोष न रहैं ॥ महावीर० ॥ ३ ॥

२३४ । राग—जैजैवंती[1] ।

ज्ञान ज्ञेयमाहिं नाहिं, ज्ञेय हू न ज्ञानमाहिं, ज्ञान ज्ञेय आन[2] आन, ज्यों मुकर[3] घट है ॥ ज्ञान० ॥ टेक ॥ ज्ञान रहै ज्ञानीमाहिं, ज्ञान विना ज्ञानी नाहिं, दोऊ एकमेक ऐसे, जैसे श्वेत पट है ॥ ज्ञान० ॥ १ ॥ ध्रुव उतपाद नास, परजाय नैन भास, दरवित एक भेद, भावको न ठट है ॥ ज्ञान० ॥ २ ॥ द्यानत दरव परजाय विकलप जाय, तव सुख पाय जव, आप आप रट है ॥ ज्ञान० ॥ ३ ॥

२३५ । राग—जैजैवंती ।

चाहत है सुख पै न गाहत है धर्म जीव, सुखको दिवैया हित भैया नाहिं छतियां[4] (?)॥ टेक ॥ दुखतैं डरै है पै भरै है अघसेती घट, दुखको करैया भय दैया दिन रतियां ॥ चाहत० ॥ १ ॥ वोयो[5] है वँवूलमूल खायो चाहै अंवे[6] मूल, दाह ज्वर नासनिको सोवै सेज ततियां

---

१ जयजयवन्ती रागमेंसे टेकें निकाल देनेसे ठीक इकतीसा कवित्त [मनहरन] बन जाता है । २ अन्य । ३ आईना—दर्पण । ४ दूसरी प्रतिमें 'वतियां' पाठ है । ५ वोया है । ६ आम्र-आम ।

॥ चाहत० ॥ २ ॥ द्यानत है सुख राई दुख मेरुकी कमाई, देखो राई चेतनकी चतुराई बतियां ॥ चाहत० ॥ ३ ॥

२३६।

देखो नाभिनंदन जगवंदन मदन भंजन गुन निरंजन राजको समाज साज, वन विचरत ॥ देखो० ॥ टेक ॥ इन्द्रिनिसौं नेह तोरि, सकल कषाय छोरि, आतमसौं प्रीत जोरि, धीरज धरत ॥ देखो० ॥ १ ॥ राग दोष मोष-कर, मोष भाव पोष कर, पोष विषै सोष करि, करम हरत ॥ देखो० ॥ २ ॥ द्यानत मेरू समान, थिर तन मन ध्यान, इन्द्र धरनिंद्र आनि, पाँइन परत ॥ देखो० ॥ ३ ॥

२३७।

पिय वैराग्य लियो है, किस मिस लेहुं मनाई ॥ पिय० ॥ टेक ॥ मो मन वे उन मनमें मैं ना, काज होय क्यों माई ॥ पिय० ॥ १ ॥ सब सिंगार उतार सखी री, तिन बिन कछु न सुहाई ॥ पिय० ॥ २ ॥ द्यानत जा विधितैं वर रीझैं, सो विधि मोहि बताई ॥ पिय० ॥ ३ ॥

२३८।

पिय वैराग्य लियो है, किस मिस देखन जाऊं ॥

१ राईके बराबर। २ इस टेकमें कुछ अक्षर ज्यादा मालूम होते हैं।

पिय० ॥ टेक ॥ व्याहन आये पशु छुटकाये, तजि रथ जन पुर गाऊं॥ पिय० ॥ १ ॥ मैं सिंगारी वे अविकारी, क्यों नभ मुठियं समाऊं ॥ पिय० ॥ २ ॥ द्यानत जोगनि ह्वै विरमाऊं, कृपा करैं निज ठाऊं ॥ पिय० ॥ ३ ॥

२३९ ।

री मा ! नेमि गये किंह ठाऊं ॥ री मा० ॥ टेक ॥ दिल मेरा कित हू लगता नहिं, ढूंढ़ौ सब पुर गाऊं ॥ री मा० ॥ १ ॥ भूषण वसन कुसुम न सुहावैं, कहा करूं कित जाऊं ॥ री मा० ॥ २ ॥ द्यानत कब मैं दरसन पाऊं, लागि रहौं प्रभु पाऊं ॥ री मा० ॥ ३ ॥

२४० ।

एरी सखी ! नेमिजीको मोहि मिलावो ॥ एरी० ॥ टेक ॥ व्याहन आये फिर कित धाये, ढूंढ़ि खबर किन लावो ॥ एरी० ॥ १ ॥ चोवा चन्दन अतर अरगजा, काहेको देह लगावो ॥ एरी० ॥ २ ॥ द्यानत प्रान बसैं पियके ढिग, प्रानके नाथ दिखावो॥एरी०॥३॥

२४१ ।

मूरतिपर वारी रे नेमि जिनिंद ॥ मूरति० ॥ टेक ॥ छपन कोटि यादवकुलमंडन, खंडन कामनरिंद ॥ मूरति० ॥ १ ॥ जाको जस सुरनर सब गावैं, ध्यावैं

---

१ ग्राम । २ आकाश । ३ मुट्ठीमें । ४ एक प्रतिमें 'नीमा' और एकमें 'नामा' पाठ है ।

ध्यान मुनिंद ॥ मूरति० ॥ २ ॥ द्यानत राजुल-आनन-प्यारे, ज्ञान-सुधाकर-इंद ॥ मूरति० ॥ ३ ॥

२४२ ।

अब मोहि तारि लै नेमिकुमार ॥ अब० ॥ टेक ॥ खग मृग जीवन बंध छुड़ाये, मैं दुखिया निरधार ॥ अब० ॥ १ ॥ मात तात तुम नाथ साथ दी, और कौन रखवार । द्यानत दीनदयाल दया करि, जगतैं लेहु निकार ॥ अब० ॥ २ ॥

२४३ ।

अब मोहि तारि लै नेमिकुमार ॥ अब० ॥ टेक ॥ चहुगँत चौरासी लख जौंनी, दुखको वार न पार ॥ अब० ॥ १ ॥ करम रोग तुम वैद अकारन, औषध वैन-उचार । द्यानत तुम पद-यंत्र धारधर, भव-ग्रीषम-तप-हार ॥ अब० ॥ २ ॥

२४४ । राग—परज ।

नेमि ! मोहि आरति तेरी हो ॥ नेमि० ॥ टेक ॥ पशू छुड़ाये हम दुख पाये, रीत अनेरी[1] हो ॥ नेमि० ॥ १ ॥ जो जानत हे[2] जोग धरेंगे, मैं क्यों घेरी हो । द्यानत हम हू संग लीजिये, विनती मेरी हो ॥ नेमि० ॥ २ ॥

---

१ अनौखी । २ थे ।

२४५ ।

मोहि तारि लै पारस स्वामी ॥ मोहि० ॥ टेक ॥ पारस परस कुधातु[1] कनक है, भयो नाम तैं नामी ॥ मोहि० ॥ १ ॥ पदमावति धरनिंद रिधि तुमतैं, जरत नाग जुग पामी । तुम संकटहर प्रगट सबनि-मैं, कर द्यानत शिवगामी ॥ मोहि० ॥ २ ॥

२४६ ।

दियैं दान महा सुख पावै ॥ दिये० ॥ टेक ॥ कूप नीर सम घर धन जानौं, कढ़ैं बढ़ै अकढ़ैं सड़ जावै ॥ दियैं० ॥ १ ॥ मिथ्याती पशु दानभावफल, भोग-भूमि सुरवास वसावै । द्यानत गास[2] अरध चौथाई, मन-वांछित विधि कब वनि आवै ॥ दियैं० ॥ २ ॥

२४७ ।

ए मेरे मीत ! निचीत कहा सोवै ॥ ए० ॥ टेक ॥ फूटी काय सराय पायकै, धरम रतन जिन खोवै ॥ ॥ ए० ॥ १ ॥ निकसि निगोद मुकत जैवेको, राह-विषैं कहा जोवै ॥ ए० ॥ २ ॥ द्यानत गुरु जागुरू[3] पुकारैं, खबरदार किन होवै ॥ ए० ॥ ३ ॥

२४८ ।

प्यारे नेमसों प्रेम किया रे ॥ प्यारे० ॥ टेक ॥ उनहीके अरचैं चरचैं, परचैं सुख होत हिया रे ॥

---

१ लोहा । २ ग्रास-कौर । ३ जागरूक-जगनेवाले ।

प्यारे० ॥ १ ॥ उनहीके गुनको सुमरौं, उनही लखि जीय जिया रे ॥ प्यारे० ॥ २ ॥ द्यानत जिन प्रभु नाम रट्यो तिन, कोटिक दान दिया रे ॥ प्यारे० ॥ ३ ॥

२४९।

मोहि तारो जिन साहिब जी ॥ मोहि० ॥ टेक ॥ दास कहाऊं क्यों दुख पाऊं, मेरी ओर निहारो ॥ मोहि० ॥ १ ॥ पटकाया प्रतिपालक स्वामी, सेवकको न विसारो ॥ मोहि० ॥ २ ॥ द्यानत तारन तरन विरद तुम, और न तारनहारो ॥ मोहि० ॥ ३ ॥

२५०।

दास तिहारो हूं, मोहि तारो श्रीजिनराय। दास तिहारो भक्त तिहारो, तारो श्रीजिनराय ॥ दास० ॥ टेक ॥ चहुँगति दुखकी आगतैं अब, लीजे भक्त बचाय ॥ दास० ॥ १ ॥ विषय कषाय ठगनि ठग्यो, दोनोंतैं लेहु छुड़ाय ॥ दास० ॥ २ ॥ द्यानत ममता नाहरी-तैं, तुम विन कौन उपाय ॥ दास० ॥ ३ ॥

२५१।

गोतम स्वामीजी मोहि वानी तनक सुनाई ॥ गोतम० ॥ टेक ॥ जैसी वानी तुमने जानी, तैसी मोहि बताई ॥ गोतम० ॥ १ ॥ जा वानीतैं श्रेणिक समझ्यो, क्षायक समकित पाई ॥ गोतम० ॥ २ ॥ द्यानत भूप अनेक तरे हैं, वानी सफल सुहाई ॥ गोतम० ॥३॥

२५२ ।

देखे धन्य घरी, आज पावापुर महावीर ॥ देखे० ॥ टेक ॥ गोतमस्वामि चंदना मेंडक, श्रेणिकसुखकर धीर ॥ देखे० ॥ १ ॥ चार ओर भवि कमल विराजैं, भक्ति फूल सुख नीर । द्यानत तीरथनायक ध्यावै, मिट जावै भव भीर ॥ देखे० ॥ २ ॥

२५३ ।

आतम महबूब यार, आतम महबूब ॥ आतम० ॥ टेक ॥ देखा हमने निहार, और कुछ न खूब ॥ आतम० ॥ १ ॥ पंचिन्द्रीमाहिं रहै, पाचोंतैं भिन्न । वादलमें भानु तेज, नहीं खेद खिन्न ॥ आतम० ॥ २ ॥ तनमें है तजै नाहिं, चेतनता सोय । लाल कीच वीच पस्यो, कीचसा न होय ॥ आतम० ॥ ३ ॥ जामें हैं गुन अनन्त, गुनमें है आप । दीवेमें जोत जोतमें है दीवा व्याप ॥ आतम० ॥ ४ ॥ करमोंके पास वसै, करमों-से दूर । कमल वारिमाहिं लसै, वारिमाहिं जूर(?) ॥ आतम० ॥ ५ ॥ सुखी दुखी होत नाहिं, सुख दुखके-माहिं । दरपनमें धूप छाहिं, घाम शीत नाहिं ॥ आतम० ॥ ६ ॥ जगके व्योहाररूप, जगसों निरलेप । अंवरमें गोद धस्यो, व्योमको न चेप ॥ आतम० ॥७॥ भाजनमें नीर भस्यो, थिरमें मुख पेख । द्यानत मनके विकार, टार आप देख ॥ आतम० ॥ ८ ॥

२५४।

चल पूजा कीजे, बनारसमें आय ॥ चल० ॥ टेक ॥ पूजा कीजे सब सुख लीजे, आनँद मंगल गाय ॥ चल० ॥ १ ॥ पारसनाथ सुपारस राजैं, देखत दुख मिट जाय ॥ चल० ॥ २ ॥ गंगाने परदक्षिण दीनी, ता पुरकी हित लाय ॥ चल० ॥ ३ ॥ द्यानत औसर आज हि आछो, वंदे प्रभुके पाय ॥ चल० ॥ ४ ॥

२५५।

सेठ सुदरसन तारनहार ॥ सेठ० ॥ टेक ॥ तीन चार दिढ़ शील अखंडित, पालैं महिमा भई अपार ॥ सेठ० ॥ १ ॥ सूलीतैं सिंघासन हूवा, सुर मिलि कीनौं जैजैकार ॥ सेठ० ॥ २ ॥ सह उपसर्ग लह्यो केवल-पद, द्यानत पायो मुकतिदुवार ॥ सेठ० ॥ ३ ॥

२५६।

पावापुर भवि वंदो जाय ॥ पावापुर० ॥ टेक ॥ परम पूज्य महावीर गये शिव, गोतम ऋपि केवलगुन पाय ॥ पावापुर० ॥ १ ॥ सो दिन अब लगि जग सब मानैं, दीवाली सम मंगल काय ॥ पावापुर० ॥ २ ॥ कातिक मावस निस तिस जागे, द्यानत अदभुत पुन्य उपाय ॥ पावापुर० ॥ ३ ॥

२५७।

जिनवरमूरत तेरी, शोभा कहिय न जाय ॥ जि-

न० ॥ टेक ॥ रोम रोम लखि हरष होत है, आनँद उर न समाय ॥ जिन० ॥ १ ॥ शांतरूप शिवराह बतावै, आसन ध्यान उपाय ॥ जिन० ॥ २ ॥ ईद फनिंद नरिंद विभौ सब, दीसत है दुखदाय ॥ जिन० ॥ ३ ॥ द्यानत पूजै ध्यावै गावै, मन वच काय लगाय ॥ जिन० ॥ ४ ॥

२५८।

तारि लै मोहि शीतल स्वामी ॥ तारि० ॥ टेक ॥ शीतल वचन चंद चन्दनतैं, भव-आताप-मिटावन नामी ॥ तारि० ॥ १ ॥ त्रिभुवननायक सब सुखदायक, लोकालोकके अंतरजामी ॥ तारि० ॥ २ ॥ द्यानत तुम जस कौन कहि सकै, वंदत पाँय भये शिवगामी ॥ तारि० ॥ ३ ॥

२५९।

तारनकों जिनवानी ॥ तारन० ॥ टेक ॥ मिथ्या चूरै सम्यक पूरै, जनम-जरामृत हानी ॥ तारन० ॥१॥ जड़ता नाशै ज्ञान प्रकाशै, शिव-मारग-अगवानी। द्यानत तीनों-लोक व्यथाहर, परम-रसायन मानी ॥ तारन० ॥ २ ॥

२६०।

होरी आई आज रँग भरी है। रंग भरी रस भरी रसौं (?)भरी है ॥ होरी० ॥ टेक ॥ चेतन पिय आये

मन भाये, करुना केसर घोर धरी है ॥ होरी० ॥ १ ॥ ज्ञान गुलाल पीत पिचकारी, ध्यान महाधुनि होत खरी है ॥ होरी० ॥२॥ द्यानत सुमति कहै समतासों, अब मोपै प्रभु दया करी है ॥ होरी० ॥ ३ ॥

२६१ ।

करुनाकर देवा ॥ करुना० ॥ टेक ॥ एक जनम दुख कहि न सकत मुख, तुम सब जानत भेवा ॥ करुना० ॥ १ ॥ हूं तो अधम तुम अधम-उधारन, दोउ वानिक बन एवा । द्यानत भाग बड़ेतैं पाये, भूलौंगा नाहिं सेवा ॥ करुना० ॥ २ ॥

२६२ ।

प्रभु तुम चरन शरन लीनौं, मोहि तारो करुणाधार ॥ प्रभु० ॥ टेक ॥ सात नरकतैं नव ग्रीवक लौं, रुल्यो अनन्ती वार ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ आठ करम वैरी बड़े तिन, दीनों दुःख अपार ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ द्यानतकी यह वीनती मेरो, जनम मरन निरवार ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥

२६३ ।

एरे वीर रामजीसों कहियो वात ॥ एरे० ॥ टेक ॥ लोक निंदतैं हमकों छांड़ी, धरम न तजियो भ्रात ॥ एरे० ॥ १ ॥ आप कमायो हम दुख पायो, तुम सुख

हो दिनरात । द्यानत सीता थिर मन कीना, मंत्र जपै अवदात[1] ॥ एरे० ॥ २ ॥

२६४ ।

तुम अधम-उधारन-हार हो, हम भगतनिके दुख हरो ॥ तुम० ॥ टेक ॥ मैं अघ-आकर[2] तुम करुणाकर, जोग बन्यो यह सार हो ॥ तुम० ॥ १ ॥ पूत कूपूत होत है स्वामी, तात न निठुर विचार हो । द्यानत दीन अनाथ राखि लै, चरन शरन आधार हो ॥ तुम० ॥ २ ॥

२६५ ।

कोढ़ी पुरुप कनक तन कीनो, अंधन आंखि दई सुखदाई ॥ टेक ॥ वहिरे शब्द वैन गूंगेको, लूले[3] हाथ पांगुले पाँई[4] ॥ कोढ़ी ॥ १ ॥ हिये-सुन्न[5] हू किये कवी-सुर, मांस खात कीने मुनिराई ॥ कोढ़ी ॥ २ ॥ द्यानत दुख काहे नाहिं मेटत, मोहि शरन तुम मन वच काई ॥ कोढ़ी ॥ ३ ॥

२६६ ।

अव मोहि तार लै शान्ति जिनन्द ॥ अव० ॥ टेक ॥ कामदेव तीर्थंकर चक्री, तीनों पद सुखवृन्द ॥ अव० ॥ १ ॥ सुरनरजुत धरमामृत वरसत, शोभा पूरन चन्द । द्यानत तीनों लोक विघन छय, जाको नाम करन्द (?) ॥ अव० ॥ २ ॥

---

१ निर्मल । २ पापकी खानि । ३ लंगडे । ४ पांव । ५ हृदयशून्य ।

२६७। राग—कान्हरा।

शरन मोहि वासुपूज्य जिनवरकी ॥ शरन० ॥टेक ॥ अधम-उधारन पतित-उधारन, दाता रिद्धि अमरकी ॥ शरन० ॥ १ ॥ अशरन शरन अनाथनाथजी, दीनदयाल नजरकी । द्यानत वालजती जग-बंधू, बंधहरन शिवकरकी ॥ शरन० ॥ २ ॥

२६८।

प्रभु ! तुम नैनन-गोचर नाहीं ॥ प्रभु० ॥ टेक ॥ मो मन ध्यावै भगति वढ़ावै, रीझ न कछु मनमाहीं ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ जनम-जरा-मृत-रोग-वैद हो, कहा करैं कहां जाहीं ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ द्यानत भव-दुख-आग-माहितैं, राख चरण-तरु-छाहीं ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥

२६९।

अब मोहि तार लै कुंथु-जिनेश ॥ अब० ॥ टेक ॥ कुंथादिक प्रानी प्रतिपालक, करुनासिंधु महेश ॥ अब० ॥ १ ॥ सम्यक-रतनत्रय-पद धारक, तारक जीव अशेष ॥ अब० ॥ २ ॥ द्यानत शोभा-सागर स्वामी, मुकतवधू-परमेश ॥ अब० ॥ ३ ॥

२७०।

जाकौं इंद अहमिंद भजत, चंद धरनिंद भजत,

१ सब।

व्यंतरके ईश भजत, भजत लोकपाल ॥ जाकौं० ॥टेक॥ राम भजत काम भजत, चक्री प्रतिकेसो[1] भजत, नारद मुनि कृष्ण रुद्र, भजत गुनमाल ॥ जाकौं० ॥ १ ॥ श्रुत-ज्ञानी औधि-ज्ञानी[2], मनपर्जै ज्ञानी ध्यानी, जपी तपी साधु सन्त, भजत तिहूँ काल ॥ जाकौं० ॥ २ ॥ राग-दोप-भाव-सुन्नै[3], जाके नाहिं पाप पुन्न, ऐसे आदि-नाथ देव, द्यानत रखवाल ॥ जाकौं० ॥ ३ ॥

२७१ ।

ज्ञाता सोई सच्चा वे, जिन आतम अच्चा ॥ ज्ञाता० ॥ टेक ॥ ज्ञान ध्यानमें सावधान है, विपय भोगमें कच्चा वे, ॥ ज्ञाता० ॥ १ ॥ मिथ्या कथन सुननिको वहिरा, जैन वैनमें मच्चा वे ॥ ज्ञाता० ॥ २ ॥ मूढ़निसेती मुख नहिं बोलै, प्रभुके आगे नच्चा वे ॥ ज्ञाता० ॥३॥ द्यानत धरमी-को यों चाहै, गाय चहै ज्यों वच्चा वे ॥ ज्ञाता० ॥ ४ ॥

२७२ ।

जग ठग मित्र न कोय वे ॥ जग० ॥ टेक ॥ सब कोऊ स्वारथको साथी, स्वारथ विना न होय वे ॥ जग० ॥ १ ॥ यह दुनिया है चाहरवाजी (?), गाफिल होय न सोय वे ॥ जग० ॥ २ ॥ द्यानत जन तिनपर वलि-हारी, जे साधरमी लोय वे ॥ जग० ॥ ३ ॥

---

१ प्रतिकेशव-प्रतिनारायण । २ अवधिज्ञानी । ३ शून्य-रहित ।

२७३।

संसारमें साता नाहीं वे ॥ संसार० ॥ टेक ॥ छिन-में जीना छिनमें मरना, धन हरना छिनमाहीं वे ॥ संसार० ॥ १ ॥ छिनमें भोगी छिनमें रोगी, छिनमें छय-दुख पाहीं वे ॥ संसार० ॥ २ ॥ द्यानत लखके मुनि होवैं जे, ते पावैं सुख ठाहीं वे ॥ संसार० ॥ ३ ॥

२७४।

मेरी मेरी करत जनम सब बीता ॥ मेरी० ॥टेक॥ परजय-रत स्वस्वरूप न जान्यो, ममता ठगनीने ठग लीता ॥ मेरी० ॥ १ ॥ इंद्री-सुख लखि सुख विसरानौ, पांचों नायक वश नहिं कीता ॥ मेरी० ॥ २ ॥ द्यानत समता-रसके रागी, विषयनि त्यागी है जग जीता ॥ मेरी० ॥ ३ ॥

२७५।

यारी कीजै साधो नाल (?) ॥ यारी० ॥ टेक ॥ आपद मेटै संपद भैंटै, वे परवाह कमाल ॥ यारी० ॥ ॥ १ ॥ परदुख दुखी सुखी निज सुखसों, तन छीनें मन लाल ॥ यारी० ॥ २ ॥ राह लगावै ज्ञान जगावै, द्यानत दीनदयाल ॥ यारी० ॥ ३ ॥

२७६।

वे परमादी ! तैं आतमराम न जान्यो ॥ वे० ॥ टेक ॥ जाको वेद पुरान बखानैं, जानैं हैं स्यादवादी ॥

वे० ॥ १ ॥ इंद फनिंद करैं जिस पूजा, सो तुझमें अविषादी ॥ वे० ॥ २ ॥ द्यानत साधु सकल जिंह ध्यावैं, पावैं समता-स्वादी ॥ वे० ॥ ३ ॥

२७७।

भोर उठ तेरो, मुख देखों जिनदेवा ! ॥ भोर० ॥ टेक ॥ देवनके नाथ इन्द्र तेतो पूजैं मुनिवृन्द, ताके पति गनधर करैं तेरी सेवा ॥ भोर० ॥ १ ॥ अतिशय कारज वसु प्रतिहारज, अनँत चतुष्टय ठाकुर एवा । द्यानत तारौ इतनौ विचारौ, इसको एक हमारो सहेवा ॥ भौर० ॥ २ ॥

२७८।

जिनपद चाहै नाहीं कोय ॥ जिन० ॥ टेक ॥ तीरथंकर पुन्यपरकृति, पुन्यरासी जोय ॥ जिन० ॥ १ ॥ मुकति चाहै नाहिं लाहै, विना चाहैं होय ॥ जिन० ॥ २ ॥ चाह दाह मिटाय द्यानत, आप आप समोय ॥ जिन० ॥ ३ ॥

२७९।

लागा आतमसों नेहरा ॥ लागा० ॥ टेक ॥ चेतन देव ध्यान विधि पूजा, जाना यह तन देहरा[1] ॥ लागा० ॥ १ ॥ मैं ही एक और नहिं दूजो, तीन लोकको

---

१ मन्दिर ।

सेहरा ॥ लागा० ॥ २ ॥ द्यानत साहब सेवक एकै, वरसै आनँद मेहरा ॥ लागा० ॥ ३ ॥

२८०।

अब मोहि तार लै अर भगवान ॥ अब० ॥ टेक ॥ दीप बिना शिवराह प्रकाशक, भव-तम-नाशक भान ॥ अब० ॥ १ ॥ ज्ञानसुधाकरजोत सदा धर, पूरन शशि सुखदान ॥ अब० ॥ २ ॥ भ्रम-तप-वारन जगहित-कारन, द्यानत मेघ समान ॥ अब० ॥ ३ ॥

२८१।

भज जम्बूस्वामी अन्तरजामी, सब जग नामी शुभ-वानी ॥ भज० ॥ टेक ॥ मथुरा-नगर मुकतमें पहुँच, अंतकेवली शिवथानी ॥ भज० ॥ १ ॥ सहित अनन्त चतुष्टय साहिब, रहित आठ दश सुखदानी । द्यानत वन्दों पाप निकन्दों, भव-दुख-पावक-हर-पानी ॥ भज० ॥ २ ॥

२८२।

भज रे मन वा प्रभु पारसको ॥ भज० ॥ टेक ॥ मन वच काय लाय लौं इनकी, छांड़ि सकल भ्रम आ-रसको ॥ भज० ॥ १ ॥ अभयदान दै दुख सब हर लै, दूर करै भव कारसको । द्यानत गावै भगति बढ़ावै, चाहै पावै ता रसको ॥ भज० ॥ २ ॥

---

१ मुकुट । २ मेह वृष्टि । ३ दूर करनेवाले । ४ कालिमा ।

२८३ ।

भजो जी भजो जिनचरनकमलको, छांड़ि विपय आमोदै जी ॥ भजो० ॥ टेक ॥ भाग उदय नरदेही पाई, अव मत जाहि निगोदै जी ॥ भजो० ॥ १ ॥ विपय भोग पाहनके वाहन, भव-जलमाहिं डवो दै जी । द्यानत और फिकर तज भज प्रभु, जो चाहै सो सो दै जी ॥ भजो० ॥ २ ॥

२८४ ।

लगन मोरी पारससों लागी ॥ लगन० ॥ टेक ॥ कमठ-मान-भंजन मनरंजन, नाग किये वड़भागी ॥ लगन० ॥ १ ॥ संकट चूरत मंगल मूरत, परम धरम अनुरागी । द्यानत नाम सुधारस स्वादत, प्रेम भगति मति पागी ॥ लगन० ॥ २ ॥

२८५ ।

वे साधौं जन गाई, कर करुना सुखदाई ॥ वे० ॥टेक॥ निरधन रोगी प्रान देत नाहिं, लहि तिहुँ जगठकुराई ॥ वे० ॥ १ ॥ क्रोड़ रास कन मेरु हेम[1] दे, इक जी-वध अधिकाई ॥ वे० ॥ २ ॥ द्यानत तीन लोक दुख पावक, मेघझरी वतलाई ॥ वे० ॥ ३ ॥

२८६ ।

आरसी देखत मन आर[2] सी लागी ॥ आरसी० ॥

---

१ सुवर्ण । २ सुईसी चुभ गई ।

टेक ॥ सेत बाल यह दूत कालको, जोबन मृग जरा बाघिनि लागी ॥ आरम्भी० ॥ १ ॥ चक्री भरत भावना भाई, चौदह रतन नवों निधि त्यागी। द्यानत दीच्छा लेत महूरत, केवलज्ञान कला घट जागी ॥ आरम्भी० ॥ २ ॥

२८७।

कहा री कहूं कछु कहत न आवै, बाहूबल बल धीरज री ॥ कहा० ॥ टेक ॥ जल मल्ल दिष्ट जुद्धमें जीत्यो, भरत चक्रको वीरज री ॥ कहा० ॥ १ ॥ जोग लियो तन फनिनि घर कियो, शोभा ज्यों अलि-नीरज री ॥ कहा० ॥ २ ॥ द्यानत बहुत दान तन दे हौं, पै हौं चरननकी रज री ॥ कहा० ॥ ३ ॥

२८८।

हो श्रीजिनराज नीतिराजा ! कीजै न्याय हमारो ॥ हो० ॥ टेक ॥ चेतन एक सु मैं जड़ बहु ये, दोनों ओर निहारो ॥ हो० ॥ १ ॥ हम तुममाहिं भेद इन कीनों, दीनों दुख अति भारो ॥ हो० ॥ २ ॥ द्यानत सन्त जान सुख दीजे, दुष्ट देश निकारो ॥ हो० ॥ ३ ॥

२८९।

अब समझ कही ॥ अब० ॥ टेक ॥ कौन कौन आपद विषयनितैं, नरक निगोद मही ॥ अब० ॥ १ ॥

---

१ मल्लयुद्ध। २ दृष्टियुद्ध। ३ सर्पोंने। ४ कमल।

एक एक इन्द्री दुखदानी, पांचौं दुखत नही ॥ अव० ॥ २ ॥ द्यानत संजम कारजकारी, धरौ तरौ सव ही ॥ अव० ॥ ३ ॥

२९० ।

सोई कर्मकी रेखपै मेख मारै ॥ सोई० ॥ टेक ॥ आपमें आपको आप धारै ॥ सोई० ॥ १ ॥ नयो बंधन करै, वँध्यो पूरव झरै, करज काढ़ै न देना विचारै ॥ सोई० ॥ २ ॥ उदय विन दिये गल जात संवर सहित, ज्ञान संजुगत जव तप सँभारै ॥ सोई० ॥ ३ ॥ ध्यान तरवारसों मार अरि मोहको, मुकति तिय वदन द्यानत निहारै ॥ सोई० ॥ ४ ॥

२९१ ।

प्रभुजी मोहि फिकर अपार ॥ प्रभु० ॥ टेक ॥ दान व्रत नाहिं होत हमपै, होंहिंगे क्यों पार ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ एक गुन थुत कहि सकत नाहिं, तुम अनन्त भँडार । भगति तेरी वनत नाहीं, मुकतकी दातार ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ एक भवके दोष केई, थूल कहूँ पुकार । तुम अनन्त जनम निहारे, दोष अपरंपार ॥ प्रभु० ॥३॥ नाथ दीनदयाल तेरो, तरनतारनहार । वंदना द्यानत करत है, ज्यों वनै त्यों तार ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

२९२ ।

तेरैं मोह नहीं ॥ तेरै० ॥ टेक ॥ चक्री पूत सु-

गुनधर बेटा, कामदेव सुत ही ॥ तेरे० ॥ १ ॥ नव भव नेह जानके कीनों, दानी श्रेयँस ही । मात तात निहचै शिवगामी, पहले सुत सब ही ॥ तेरे० ॥ २ ॥ विद्याधरके नृप कर कीनों, साले गनधर ही । बेटीको गननी पद दीनों, आरजिका सब ही ॥ तेरे० ॥ ३ ॥ पोता आप बराबर कीनों, महावीर तुम ही । द्यानत आपन जान करत हो, हम हू सेवक ही ॥तेरे० ॥ ४ ॥

२९३।

कर मन ! वीतरागको ध्यान ॥ कर० ॥ टेक ॥ जिन जिनराज जिनिंद जगतपति, जगतारन जग-जान ॥ कर० ॥ १ ॥ परमातम परमेम परमगुरु, पर-मानंद प्रधान । अलख अनादि अनन्त अनूपम, अजर अमर अमलान ॥ कर० ॥ २ ॥ निरंकार अविकार निरंजन, नित निरमल निरमान । जती व्रती मुन ऋषी सुखी प्रभु, नाथ धनी गुन ज्ञान ॥ कर० ॥ ३ ॥ सिव सरवज्ञ सिरोमनि साहब, सांई सन्त सुजान । द्यानत यह गुन नाममालिका, पहिर हिये सुखदान ॥ कर० ॥ ४ ॥

२९४।

शुद्ध स्वरूपको वंदना हमारी ॥ शुद्ध० ॥ टेक ॥ एक रूप वसु रूप विराजै, सुगुन अनन्त रूप अवि-

१ आर्यिकाओंमें मुख्य।

कारी ॥ शुद्ध० ॥ १ ॥ अमल अचल अविकलप अजलंपी, परमानंद चेतना धारी ॥ शुद्ध० ॥ २ ॥ द्यानत द्वैतभाव तज हूजै, भाव अद्वैत सदा सुखकारी॥ शुद्ध० ॥ ३ ॥

२९५ ।

चौवीसौंको वंदना हमारी ॥ चौवीसौं० ॥ टेक ॥ भवदुखनाशक सुखपरकाशक, विघनविनाशक मंगलकारी ॥ चौवीसौं० ॥ १ ॥ तीनलोक तिहुँकालनिमाहीं. इन सम और नहीं उपगारी ॥ चौवीसौं० ॥ ॥ २ ॥ पंच कल्यानक महिमा लखकै, अद्भुत हरप लहैं नरनारी ॥ चौवीसौं० ॥ ३ ॥ द्यानत इनकी कौन चलावै, विंब देख भये सम्यकधारी ॥ चौवीसौं० ॥४॥

२९६ ।

सेऊं स्वामी अभिनन्दनको ॥ सेऊं० ॥ टेक ॥ लेकै दीप धूप जल फल चरु, फूल अछत चंदनको ॥ सेऊं० ॥१॥ नाचौं गाय वजाय हरपसों, प्रीत करों वंदनको ॥ सेऊं० ॥ २ ॥ द्यानत भगतिमाहिं दिन वीतैं, जीतैं भव फंदनको ॥ सेऊं० ॥ ३ ॥

२९७ ।

एक समय भरतेश्वर स्वामी, तीन वात सुनी तुरत फुरत ॥ एक०॥ टेक ॥ चक्र रतन प्रभुंज्ञान जनम सुत,

---

१ मौनावलम्बी । २ ऋषभदेवको केवलज्ञानका प्रगट होना ।

पहलैं कीजै कौन कुरत ॥ एक० ॥ १ ॥ धर्मप्रसाद सबै शुभ सम्पति, जिन पूजैं सब दुरत दुरत । चक्र उछाह कियो सुत मंगल, द्यानत पायो ज्ञान तुरत ॥ एक० ॥ २ ॥

२९८।

तू ही मेरा साहिब सचा साँई ॥ तू ही० ॥ टेक ॥ काल अनन्त रुल्यो जगमाहीं, आपद बहुविधि पाई ॥ तू ही० ॥ १ ॥ तुम राजा हम परजा तेरे, कीजिये न्याव न काँई ॥ तू ही० ॥ २ ॥ द्यानत तेरा करमनि घेरा, लेहु छुड़ाय गुसाँई ॥ तू ही० ॥ ३ ॥

२९९।

सचा साँई, तूही है मेरा प्रतिपाल ॥ सचा० ॥टेक॥ तात मात सुत शरन न कोई, नेह लगा है तेरे नाल (१)॥ सचा० ॥ १ ॥ तनदुख मनदुख जनदुखमाहीं, सेवक निपट विहाल ॥ सचा० ॥ २ ॥ द्यानत तुम बहु तारन-हारे, हमहुको लेहु निकाल ॥ सचा० ॥ ३ ॥

३००।

इस जीवको, यों समझाऊं री ! ॥ इस० ॥ टेक ॥ अरस अफरस अगंध अरूपी, चेतन चिन्ह बताऊं री ॥ इस० ॥ १ ॥ तन तत तत तन, थेई थेई थेई थेई तन नन री री गाऊं री ॥ इस० ॥ २ ॥ द्यानत,

१ कुल—काम । २ पाप । ३ दूर भागे ।

सुमत कहै सखियनसों, सोहं सीख सिखाऊं री ॥ इस० ॥ ३ ॥

३०१ ।

मैं न जान्यो री ! जीव ऐसी करैगो ॥ मैं० ॥टेक॥ मोसौं विरति कुमतिसों रति कैं, भवदुख भूरि भरैगो ॥ मैं० ॥ १ ॥ स्वारथ भूलि भूलि परमारथ, विषयारथमें परैगो ॥ मैं० ॥ २ ॥ द्यानत जब समतासों राचै, तब सब काज सरैगो[1] ॥ मैं० ॥ ३ ॥

३०२ ।

तुम चेतन हो ॥ तुम० ॥ टेक ॥ जिन विषयनि सँग दुख पावै सो, क्यों तज देत न हो ॥ तुम० ॥१॥ नरक निगोद कषाय भमावै, क्यों न सचेतन हो ॥ तुम० ॥ २ ॥ द्यानत आपमें आपको जानो, परसों हेत[2] न हो ॥ तुम० ॥ ३ ॥

३०३ ।

तैं कहुँ देखे नेमिकुमार ॥ तैं० ॥ टेक ॥ पशुगन बंध छुड़ावनिहार, मेरे प्रानअधार ॥ तैं० ॥ १ ॥ बालब्रह्मचारी गुनधारी, कियो मुकतिसों प्यार ॥ तैं ॥ २ ॥ द्यानत कब मैं दरसन पाऊं, धन्य दिवस धनि वार ॥ तैं० ॥ ३ ॥

---

१ सिद्ध होगा । २ ममत्व ।

३०४।

कौन काम मैंने कीनों अब, लीनों नरक निवास हो ॥ कौन० ॥ टेक ॥ बहुतननि तप करि सुर शिव साध्यो, मैं साध्यो दुखरास हो ॥ कौन० ॥ १ ॥ नरभव लहि बहु जीव सताये. साधे विषय विलास हो। पीतम रिपु रिपु पीतम जानें, मिथ्यामत-बिसवास हो ॥ कौन० ॥ २ ॥ धनके साथी जीव बहुत थे, अब दुख एक न पास हो । यहां महादुख भोग छूटिये, राग दोषको नास हो ॥ कौन० ॥ ३ ॥ देव धरम गुरु नव तत्त्वनिकी, सरधा दिढ़ अभ्यास हो। द्यानत हौं सुखमय अविनाशी, चेतनजोति प्रकाश हो ॥ कौन० ॥४॥

३०५।

नेमीश्वर खेलन चले, रंग हो हो होरी, सुगुन सखा[१] संग भूप रंग, रंग हो हो होरी ॥ नेमीश्वर० ॥ टेक ॥ महा विराग वसन्तमें, रंग हो हो होरी। समझ सुवास अनूप रंग, रंग हो हो होरी ॥ नेमीश्वर० ॥ १ ॥ वसन महाव्रत धारके, रंग हो हो होरी। छिरके छिमा बनाय रंग, रंग हो हो होरी। पिचकारी कर प्रीतिकी रंग रंग हो हो होरी। रीझ रंग अधिकाय रंग, रंग हो हो होरी ॥ नेमीश्वर० ॥ २ ॥ ज्ञान गुलाल सुहावनी रंग, रंग हो हो होरी । अनुभव अतर सुख्याल

---

१ प्यारे मित्र।

रंग, रंग हो हो होरी। प्रेम पखावज वजत रंग, रंग हो हो होरी। तत्त्व स्वपर दो ताल रंग, रंग हो हो होरी ॥ नेमीश्वर० ॥ ३ ॥ संजम सिरनी अति भली रंग, रंग हो हो होरी। मेवा मगन सुभाव रंग, रंग हो हो होरी। सम रस सीतल फल लहै रंग, रंग हो हो री। पान परम पद चाव रंग, रंग हो हो होरी ॥ नेमीश्वर० ॥ ४ ॥ आतम ध्यान अगन भई रंग, रंग हो हो होरी। करम काठ समुदाय रंग, रंग हो हो-होरी। धर्म धुलहड़ी खेलकैं रंग, रंग हो हो होरी। सदा सहज सुखदाय रंग, रंग हो हो होरी ॥ नेमीश्वर० ॥ ५ ॥ रजमति मनमें कहति है रंग, रंग हो हो होरी। हम तजि भजि शिव नारि रंग, रंग हो हो होरी। द्यानत हम कब होंहिंगे रंग, रंग हो हो होरी। शिववनिताभरतार रंग, रंग हो हो हो-री ॥ नेमीश्वर० ॥ ६ ॥

२०६।

सोई ज्ञान सुधारस पीवै ॥ सोई० ॥ टेक ॥ जीवन दशा मृतक करि जानै, मृतक दशामें जीवै ॥ सोई० ॥ १ ॥ सैन[1]दशा जाग्रत करि जानै, जागत नाहीं सोवै। मीतौं[2]को दुशमन करि जानै, रिपुको प्रीतम जोवै ॥ सोई० ॥ २ ॥ भोजनमाहिं वरत करि बूझै, व्रतमें

---

१ सोनेकी दशाको। २ मित्रोंको।

होत अहारी। कपड़े पहिरैं नगन कहावै, नागा अंबर-धारी ॥ सोई० ॥ ३ ॥ बस्तीको ऊजर कर देखै, ऊजर बस्ती भारी। द्यानत उलट चालमें सुलटा, चेतनजोति निहारी ॥ सोई० ॥ ४ ॥

२०७।

आतम अनुभव कीजिये, यह संसार असार हो ॥ आतम० ॥ टेक ॥ जैसो मोती ओसको, जात न लागै बार हो ॥ आतम० ॥ १ ॥ जैसैं सब बनिजांविषैं, पैसा उतपतै सार हो। तैसैं सब ग्रंथनिविषैं, अनुभव हित निरधार हो ॥ आतम० ॥ २ ॥ पंच महाव्रत जे गहैं, सहैं परीषह भार हो। आतमज्ञान लखैं नहीं, बूड़ैं कालीधार हो ॥ आतम० ॥ ३ ॥ बहुत अंग पूरब पढ़्यो, अभयसेन(?) गँवार हो। भेदविज्ञान भयो नहीं, रुल्यो सरब संसार हो ॥ आतम० ॥ ४ ॥ बहु जिन-बानी नहिं पढ़्यो, शिवभूती अनगार हो। घोष्यो तुष अरु मापको, पायो मुकतिदुवार हो ॥ आतम० ॥ ५ ॥ जे सीझे जे सीझ हैं, जे सीझैं इहि बार हो। ते अनु-भव परसादतैं, यों भाष्यो गनधार हो ॥ आतम० ॥ ६ ॥ पारस चिन्तामनि सबै, सुरतरुआदि अपार

१ वस्त्रधारी। २ व्यापारोंमें। ३ उत्पत्ति, प्राप्ति। ४ मुनि। ५ उड़दकी दालसे जैसे उसका छिलका भिन्न है, इसी तरह आत्मासे शरीर भिन्न है, ऐसा कहते २।

हो । ये विषयासुखको करैं; अनुभवसुख सिरदार हो ॥ आतम० ॥ ७ ॥ इंद फनिंद नरिंदके. भाव सराग विथार हो। द्यानत ज्ञान विरागतैं, तद्भव मुकतिमँझार हो ॥ आतम० ॥ ८ ॥

३०८।

जानौं पूरा ज्ञाता सोई ॥ जानौं० ॥ टेक ॥ रागी नाहीं रोषी नाहीं, मोही नाहीं होई ॥ जानौं० ॥ १ ॥ क्रोधी नाहीं मानी नाहीं, लोभी धी ना ताकी । ज्ञानी ध्यानी दानी जानी, वानी मीठी जाकी ॥ जानौं० ॥ २ ॥ सांई सेती सच्चा दीसै, लोगोंहूका प्यारा । काहू जीका दोषी नाहीं, नीका पैंडा वारा ॥ जानौं० ॥ ३ ॥ काया सेती माया सेती, जो न्यारा है भाई । द्यानत ताको देखै जानै, ताहीसों लौ लाई ॥ जानौं० ॥ ४ ॥

३०९।

प्रभुजी प्रभू सुपास ! जगवासतैं दास निकास ॥ प्रभु० ॥ टेक ॥ इंदके स्वाम फनिंदके स्वाम, नरिंदके चन्दके स्वाम । तुमको छांड़के किसपै जावैं, कौनका ढूंढ़ैं धाम ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ भूप सोई दुख दूर करै है, साह सोई दै दान । वैद सोई सब रोग मिटावै, तुमी सबै गुनवान ॥ प्रभु० ॥२॥ चोर अंजनसे तार लिये हैं, जार कीचकसे राव । हम तो सेवक सेव करै हैं, नाम

१ बुद्धि ।

जपैं मन चाव ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥ तुम समान हुए न होंगे, देव त्रिलोकमँझार। तुम दयाल देवोंके देव हो, द्यानतको सुखकार ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

३१०।

नगरमें होरी हो रही हो ॥ नगर० ॥ टेक ॥ मेरो पिय चेतन घर नाहीं, यह दुख सुन है को ॥ नगर० ॥ १ ॥ सोति कुमतिके राच रह्यो है, किहि विध लाऊं सो ॥ नगर० ॥ २ ॥ द्यानत सुमति कहै जिन स्वामी, तुम कछु सिच्छा दो ॥ नगर० ॥ ३ ॥

३११।

खेलौंगी होरी, आये चेतनराय ॥ खेलौं० ॥ टेक ॥ दरसन वसन ज्ञान रँग भीने, चरन गुलाल लगाय ॥ खेलौं० ॥ १ ॥ आनँद अतर सुनय पिचकारी, अनहद वीन वजाय ॥ खेलौं० ॥ २ ॥ रीझौं आप रिझावौं पियको, प्रीतम लौं गुन गाय ॥ खेलौं० ॥ ३ ॥ द्यानत सुमति सुखी लखि सुखिया, सखी भई बहु भाय ॥ खेलौं० ॥ ४ ॥

३१२।

पिया विन कैसे खेलौं होरी ॥ पिया० ॥ टेक ॥ आतमराम पिया नहिं आये, मोकों होरी कोरी ॥ पिया० ॥ १ ॥ एक वार प्रीतम हम खेलैं, उपशम

---

१ चारित्र।

केसर घोरी ॥ पिया० ॥ २ ॥ द्यानत वह समयो कब पाऊं, सुमति कहै कर जोरी ॥ पिया० ॥ ३ ॥

३१३ ।

भली भई यह होरी आई, आये चेतनराय ॥ भली० ॥ टेक० ॥ काल वहुत प्रीतम विन वीते, अब खेलौं मन लाय ॥ भली० ॥ १ ॥ सम्यक रंग गुलाल वरतमें, राग विराग सुहाय । द्यानत सुमति महा सुख पायो, सो वरन्यो नहिं जाय ॥ भली० ॥ २ ॥

३१४ ।

तेरी भगत विना धिक है जीवना ॥ तेरी० ॥ टेक ॥ जैसे वेगारी दरजीको, पर घर कपड़ोंका सीवना ॥ तेरी० ॥ १ ॥ मुकट विना अम्वर सव पहिरे, जैसे भोजनमें घीव ना ॥ तेरी० ॥ २ ॥ द्यानत भूप विना सव सेना, जैसे मंदिरकी नीव ना ॥ तेरी० ॥ ३ ॥

३१५ ।

कर्मनिको पेलै, ज्ञान दशामें खेलै ॥ कर्म० ॥ टेक ॥ सुख दुख आवै खेद न पावै, समता रससों ठेलै ॥ कर्म० ॥ १ ॥ सुदरव गुन परजाय समझके, पर-परिनाम धकेलै ॥ कर्म० ॥ २ ॥ आनँदकंद चिदानँद साहव, द्यानत अंतर झेलै ॥ कर्म० ॥ ३ ॥

३१६ ।

चेतन नागर हो तुम, चेतो चतुर सुजान, आपहित

कीजिये हो ॥ चेतन ॥ टेक ॥ प्रथम प्रणमु अरहन्त जिनेश्वर, अनँत चतुष्टयधारी । सिद्ध सूरि गुरु मुनि-पद वन्दों, पंच परम उपगारी ॥ वन्दों शारद भवदधि-पारद, कुमतिविनाशनहारी । देहु सुवुद्धि मेरे घट अन्तर, कहों कथा हितकारी ॥ चेतन० ॥ १ ॥ यह संसार अनादि अनन्त, अपार असार वतायो । जीय अनादि कालसों ले करि, मिथ्यासों लपटायो ॥ तातैं भ्रमत चहूँगति भीतर, सुख नहिं दुख वहु पायो । जिन-वानीसरधान विना तैं, काल अनन्त गुमायो ॥ चेतन० ॥ २ ॥ काम भोगकै सुख मानत है, विषय रोगकी पीरा । तासु विपाक अनन्त गुणा तोहि, नरकमाहिं है धीरा ॥ पाप करमकरि सुख चाहत है, सुख नाहिं है है वीरा । वोये आक आम किमि खेहो, कॉच न है है हीरा ॥ चेतन० ॥ ३ ॥ पाप करम करि दरव कमायो, पापहि हेत लगायो । दोनों पाप कौन भोगैगो, सो कछु भेद न पायो ॥ दुशमन पोपि हरप वहु मान्यो मित्र न संग सुहायो । नरभव पाय कहा तैं कीनों, मानुष वृथा कहायो ॥ चेतन० ॥ ४ ॥ सात नरकके दुख भूले अरु गरभ जनम दू भूले । काल दाढ़ विच कौन अशुचि तन, कहा जान जिय फूले ॥ जान वृद्ध तुम भये वावरे, भरम हिंडोले झूले । राई सम दुख सह न सकत हो, काम करत दुखमूले ॥ चेतन० ॥ ५ ॥

साता होत कछुक सुख मानै, होत असाता रोवै । ये दोनों हैं कर्म अवस्था, आप नहीं किन जोवै ॥ और-न सीख देत वहु नीकी, आप न आप सिखावै । सांच साच कछु झूठ रंच नहिं, याहीतैं दुख पावै ॥ चेतन० ॥ ६ ॥ पाप करत वहु कष्ट होत है, धरम करत सुख भाई ! वाल गुपाल सवै इम भाषैं, सो कहनावत आई ॥ दुहिमें जो तोकौं हित लागै, सो कर मनवच-काई । तुमको वहुत सीख क्या दीजे, तुम त्रिभुवन-के राई ॥ चेतन० ॥ ७ ॥ त्रस पंचेन्द्रीसेती मानुष, औसर फिर नहिं पै है । तन धन आदि सकल सामग्री देखत देखत जै है ॥ समझ समझ अव ही तू प्राणी ! दुरगतिमें पछतैहै । भज अरहन्तचरण जुग द्यानत, वहुरि न जगमें ऐ है ॥ चेतन० ॥ ८ ॥

३१७ । राग—सोरठ ।

प्राणी ! आतमरूप अनूप है, परतैं भिन्न त्रिकाल ॥ प्राणी० ॥ टेक ॥ यह सव कर्म उपाधि है, राग दोष भ्रम जाल ॥ प्राणी० ॥ १ ॥ कहा भयो काई लगी, आतम दरपनमाहिं । ऊपरली ऊपर रहै, अंतर पैठी नाहिं ॥ प्राणी० ॥ २ ॥ भूलि जेवरी अहि मुन्यो, ठूंठ लख्यो नररूप । त्यों ही पर निज मानिया, वह जड़ तू चिद्रूप प्राणी० ॥ ३ ॥ जीव-कनक तन-मैलके, भिन्न भिन्न परदेश । माहैं माहैं संध है, मिलैं नहीं लव

लेश ॥ प्राणी० ॥ ४ ॥ घन करमनि आच्छादियो, ज्ञानभानपरकाश । है ज्योंका त्यों शास्वता, रंचक होय न नाश ॥ प्राणी० ॥ ५ ॥ लाली झलकै फटिकमें फटिक न लाली होय । परसंगति परभाव है, शुद्ध-स्वरूप न कोय ॥ प्राणी० ॥ ६ ॥ त्रस थावर नर नारकी, देव आदि बहु भेद । निहचै एक स्वरूप हैं, ज्यों पट सहज सुपेद ॥ प्राणी० ॥ ७ ॥ गुण ज्ञानादि अनन्त हैं, परजय सकति अनन्त । द्यानत अनुभव कीजिये, याको यह सिद्धन्त ॥ प्राणी० ॥ ८ ॥

३१८ । राग—बिलावल ।

सबमें हम हममें सब ज्ञान, लखि बैठे दृढ़ आसन तान ॥ सबमें० ॥ टेक ॥ भूमिमाहिं हम हममें भूमि, क्यों करि खोदैं धामाधूम ॥ सबमें० ॥ १ ॥ नीर-माहिं हम हममें नीर, क्यों करि पीवैं एक शरीर ॥ सबमें० ॥ २ ॥ आगमाहिं हम हममें आगि, क्यों करि जालैं हिंसा लागि ॥ सबमें० ॥ ३ ॥ पौन माहिं हम हममें पौन, पंखा लेय विराधै कौन ॥ सबमें० ॥ ४ ॥ रूखमाहिं हम हममें रूख, क्योंकरि तोड़ैं लागैं भूख ॥ सबमें० ॥ ५ ॥ लट चैंटी माखी हम एक, कौन सतावै धारि विवेक ॥ सबमें० ॥ ६ ॥ खग मृग मीन सबै हम जात, सबमें चेतन एक वि-ख्यात ॥ सबमें० ॥ ७ ॥ सुर नर नारक हैं हम रूप,

सवमें दीसै है चिद्रूप ॥ सवमें० ॥ ८ ॥ वालक वृद्ध तरुन तनमाहिं, पंढ[1] नारि नर धोखा नाहिं ॥ सवमें० ॥ ९ ॥ सोवन वैठन वचन विहार, जतनं[2] लिये आहार निहार ॥ सवमें० ॥ १० ॥ आयो लैंहिं न न्यौते जाहिं, परघर फासू[3] भोजन खाहिं ॥ सवमें० ॥ ११ ॥ पर संगतिसों दुखित अनाद, अव एकाकी अम्रत स्वाद ॥ सवमें० ॥ १२ ॥ जीव न दीसै है जड़ अंग, राग दोष कीजै किहि संग ॥ सवमें० ॥ १३ ॥ निरमल तीरथ आतमदेव, द्यानत ताको निशिदिन सेव ॥ सवमें० ॥ १४ ॥

३१९ । राग—आसावरी जोगिया ।

कलिमें ग्रंथ वड़े उपगारी ॥ कलि० ॥ टेक ॥ देव शास्त्र गुरु सम्यक सरधा, तीनों जिनतैं धारी ॥ कलि० ॥ १ ॥ तीन वरस वसु मास पंद्र दिन, चौथा काल रहा था। परम पूज्य महावीरस्वामि तव, शिवपुर-राज लहा था ॥ कलि० ॥ २ ॥ केवलि तीन पांच श्रुतिकेवलि, पीछैं गुरुनि विचारी । अंगपूर्व अव हैं न रहैंगे, वात लिखी थिरथारी ॥ कलि० ॥ ३ ॥ भवि-हित कारन धर्मविथारन, आचारजों वनाये । वहु तिन तिनकी टीका कीनीं, अदभुत अरथ समाये ॥ कलि० ॥ ४ ॥ केवल श्रुतकेवलि यहां नाहीं, मुनि

---

१ नपुंसक । २ यत्नपूर्वक । ३ प्राशुक ।

गुन प्रगट न सूझैं। दोऊ केवलि आज यहीं हैं, इनहीको मुनि पूझैं ॥ कलि० ॥ ५ ॥ बुद्धि प्रगट कर आप वांचिये, पूजा चंदन कीजै। दरब खरच लिखवाय सुधाय सु, पण्डित जन बहु दीजै ॥ कलि० ॥ ६ ॥ पढ़तैं सुनतैं चरचा करतैं, ह्वै संदेह जु कोई। आगम माफिक ठीक करै कै, देख्यो केवल सोई ॥ कलि० ॥ ७ ॥ तुच्छबुद्धि कछु अरथ जानिकै, मनमों विंग उठाये। औधज्ञानि श्रुतज्ञानी मानो, सीमंधर मिलि आये ॥ कलि० ॥ ८ ॥ यह तो आचारज है सांचो. ये आचारज झूठे। तिनके ग्रंथ पढ़ैं नित वंदैं, सरधा ग्रंथ अपूठे ॥ कलि० ॥ ९ ॥ सांच झूठ तुम क्यों करि जान्यो, झूठ जानि क्यों पूजो। खोट निकाल शुद्ध करि राखो, और बनावो दूजो ॥ कलि० ॥ १० ॥ कौन सहामी बात चलावै, पूछै आनमती तौ। ग्रंथ लिख्यो तुम क्यों नहिं मानौ, ज्वाब कहा कहि जीतौ ॥ कलि० ॥ ११ ॥ जैनी जैनग्रंथके निंदक, हुण्डासर्प्पिनि जोरा। द्यानत आप जान चुप रहिये, जगमें जीवन थोरा ॥ कलि० ॥ १२ ॥

३२०।

कीजे हो भाईयनिसों प्यार ॥ कीजे० ॥ टेक ॥ नारी सुत बहुतेरे मिलै हैं, मिलैं नहीं मा जाये यार ॥ कीजे० ॥ १ ॥ प्रथम लराई कीजे नाहीं, जो लड़िये

तो नीति विचार । आप सलाह किधौं पंचनिमें, दुई चढ़िये ना हाकिम द्वार ॥ कीजे० ॥ २ ॥ सोना रूपा वासन कपड़ा, घर हाटनकी कौन शुमार । भाई नाम वरन दो ऊपर, तन मन धन सब दीजे वार ॥ कीजे० ॥ ३ ॥ भाई बड़ा पिता परमेश्वर, सेवा कीजे तजि हंकार । छोटा पुत्र ताहि सब दीजे, वंश बेल बिरधै अधिकार ॥ कीजे० ॥ ४ ॥ घर दुख बाहिरसों नहिं टूटै, बाहिर दुख घरसों निरवार । गोत घाव नाहिं चक्र करत है, अरि सब जीतनको भयकार ॥ कीजे० ॥ ५ ॥ कोई कहै हनैं भाईको, राज काज नाहिं दोष लगार । यह कलिकाल नरकको मारग, तुर्कनिमें[1] हममें न निहार ॥ कीजे० ॥ ६ ॥ होहि हिसाबी तो गम खइये, नाहक झगड़ै कौन गँवार । हाकिम लूटैं पंच बिगूचैं, मिलैं नहीं वे आंखैं चार ॥ कीजै० ॥ ७ ॥ पैसे कारन लड़ैं निखट्टू, जानैं नाहिं कमाई सार । उद्यममें लछमीका वासा, ज्यों पंखेमें पवन चितार ॥ कीजे० ॥ ८ ॥ भला न भाई भाव न जामें, भला पड़ौसी जो हितकार । चतुर होय परन्याव चुकावै, शठ निज न्याव पराये द्वार ॥ कीजे० ॥ ९ ॥ जस जीवन अपजस मरना है, धंन जोवन बिजली उनहार । द्यानत

---

१ तुर्कोंमे अर्थात् मुगलोंमे । राजके लिये वे भाईयोंको मार डालते थे ।

चतुर छमी सन्तोषी, धरमी ते विरले संसार ॥ कीजे० ॥ १० ॥

३२१।

क्रोध कषाय न मैं करौं, इह परभव दुखदाय हो ॥ टेक ॥ गरमी व्यापै देहमें, गुनसमूह जलि जाय हो ॥ क्रोध० ॥ १ ॥ गारी दे मास्यो नहीं, मारि कियो नाहिं दोय हो । दो करि समता ना हरी, या सम मीत न कोय हो ॥ क्रोध० ॥ २ ॥ नासै अपने पुन्यको, काटै मेरो पाप हो । ता प्रीतमसों रूसिकै, कौन सहै सन्ताप हो ॥ क्रोध० ॥ ३ ॥ हम खोटे खोटे कहैं, सांचेसों न विगार हो । गुन लखि निंदा जो करै, क्या लाबेरसों रार हो ॥ क्रोध० ॥ ४ ॥ जो दुरजन दुख दे नहीं, छिमा न है परकास हो । गुन परगट करि सुख करै, क्रोध न कीजे तास हो ॥ क्रोध० ॥ ५ ॥ क्रोध कियेसों कोपिये, हमें उसे क्या फेर हो । सज्जन दुरजन एकसे, मन थिर कीजे मेरे हो ॥ क्रोध० ॥ ६ ॥ बहुत कालसों साधिया, जप तप संजम ध्यान हो । तासु परीक्षा लैनको, आयो समझो ज्ञान हो ॥ क्रोध० ॥७॥ आप कमायो भोगिये, पर दुख दीनों झूठ हो । द्यानत परमानन्द मय, तू जगसों क्यों रूठ हो ॥ क्रोध० ॥८॥

---

१ दो टुकड़े तो न किये । २ झूठेसे । ३ लड़ाई । ४ सुनेनके समान ।

३२२ । राग–सोरठमें ख्याल ।

भाई काया तेरी दुखकी ढेरी, विखरत सोच कहा है। तेरे पास सासतौ तेरो, ज्ञानशरीर महा है ॥ भाई० ॥ १ ॥ ज्यों जल अति शीतल है काचौ, भाजन दाह दहा है (?) । त्यों ज्ञानी सुखशान्त कालका, दुख समभाव सहा है ॥ भाई० ॥ २ ॥ वोदे उतरैं नये पहिरतैं, कौंने खेद गहा है । जप तप फल परलोक लहैं जे, मरकै वीर कहा है ॥ भाई० ॥ ३ ॥ द्यानत अन्तसमाधि चहैं मुनि, भागौं दाव लहा है। वहु तज मरण जनम दुख पावक, सुमरन धार वहा है ॥ भाई० ॥ ४ ॥

३२३ । मंगल आरती राग– भैरों ।

मंगल आरती कीजे भोर, विघनहरन सुखकरन किरोर ॥ मंगल ॥ टेक ॥ अरहत सिद्ध सूरि उवझाय, साधु नाम जपिये सुखदाय ॥ मंगल ॥ १ ॥ नेमिनाथ स्वामी गिरनार, वासुपूज्य चम्पापुर धार । पावापुर महावीर मुनीश, गिरि कैलास नमों आदीश ॥ मंगल० ॥ २ ॥ सिखर समेद जिनेश्वर वीस, वंदों सिद्धभूमि निशिदीस । प्रतिमा स्वर्ग मर्त्य पाताल, पूजों कृत्य अकृत्य त्रिकाल ॥ मंगल ॥ ३ ॥ पंच कल्याणक काल

---

१ द्यानतजीकी दश आरती हमने अलग छपाई हैं, इसलिये इस पदसंग्रहमें शामिल नहीं की हैं । प्रकाशक–

नमामि, परम उदारिक तन गुणधाम । केवलज्ञान आनमाराम, यह षटविधि मंगल अभिराम ॥ मंगल ॥ ॥ ४ ॥ मंगल तीर्थंकर चौवीस, मंगल सीमंधर जिन वीस । मंगल श्रीजिनवचन रसाल, मंगल रतनत्रय गुनमाल ॥ मंगल ॥ ५ ॥ मंगल दशलक्षण जिनधर्म, मंगल सोलहकारन पर्म । मंगल बारहभावन सार, मंगल संघ चारि परकार ॥ मंगल ॥ ६ ॥ मंगल पूजा श्रीजिनराज, मंगल शास्त्र पढ़े हितकाज । मंगल सतसंगति समुदाय, मंगल सामायिक मन लाय ॥ मंगल० ॥ ७ ॥ मंगल दान शील तप भाव, मंगल [illegible]पथूको चाव । द्यानत मंगल आठों जाम, मंगल महा मुक्ति जिनस्वाम ॥ मंगल० ॥ ८ ॥

समाप्तोऽयं पदसंग्रहः
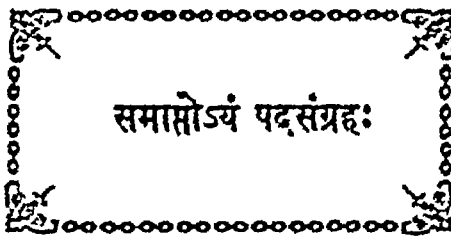
जैनहितैषी मासिकपत्र।

हमारे पुस्तकालयसे इस नामका एक वढियां मासिकपत्र निकलता है, जिसमें सामाजिक, धार्मिक, तथा ऐतिहासिक उत्तमोत्तम लेख कविता मनोरंजक चुटकुले शिक्षाप्रद हृदयग्राही उपन्यास, जीवनचरित्र आदि अनेक विषय हर महीने छपा करते है। जैनियोमें इससे अच्छा और कोई मासिकपत्र नहीं है। वडी भारी खूवी यह है कि इसके ग्राहकोंको प्रतिवर्ष उपहारमें (भेटमें) वढियां २ ग्रन्थ दिये जाते है, जिनका मूंल्य अलग लेनेसे वार्षिक मूल्यके ही वरावर हो जाता है। अर्थात् मासिकपत्रके मूल्यमें उपहार मिल जाता है, मासिकपत्र सालभर मुफ्तमें ही आया करता है। इस पत्रके निकालनेमें हमको वरावर घाटा रहता है, तौ भी उत्तमोत्तम ग्रन्थोके प्रचारके लिये और अपने विचारोंको सव भाइयोंके समक्ष प्रकाशित करनेके लिये निकाल रहे है। धर्मात्मा भाइयोंको इसके ग्राहक वनकर हमारे उत्साहको वढाना चाहिये। वार्षिक मूल्य उपहार डांकखर्च वगैरहके सहित कुल १॥) डेड रुपया मात्र है।

नमूनेका अंक मुफ्तमें भेजा जाता है। जरूर मंगाइये। एकवार वांचते ही ग्राहक होना पड़ेगा। उपन्यास प्रत्येक अंकमें एक पूरा निकलता है।

मैनेजर-जैनग्रन्थरत्नाकरकार्यालय

पो० गिरगाव-वम्बई